तृतीयावृत्ति
२००१ वि०

मूल्य
१।।)

श्रीरामकिशोर गुप्त द्वारा
साहित्य प्रेस, चिरगाँव (झाँसी) में मुद्रित।

बचपन से लेकर अभी अभी दो महीने पहले तक जिनकी कथा-कहानियों से, स्नेह और वात्सल्य से हृदय बराबर हरा होता आया है; जिनसे कितना क्या जीवन में पाया है, इसका हिसाब नहीं; जो हृदय की सामान्य कृतज्ञता प्रकट कर सकने का प्रसङ्ग आने पर आधी बात सुन कर ही सदा के लिए ओट हो गये हैं; उन्हीं श्रद्धेय मुंशीजी (राजकवि श्रीअजमेरी) की पवित्र स्मृति में यह रचना श्रद्धा के साथ अर्पित है ।

गुरुपूर्णिमा १९९४

श्रीः

नारी

(१)

डाकिये ने एक कच्चे घर के सामने रुक कर पुकारा—जमना बाई हैं ?

उत्तर न पाकर भी किसी के भीतर होने का बोध उसे हुआ। नाक पर चश्मा ठीक से सँभाल कर, उसने डाक उलट-पुलट कर देखी। "यही है"—कह कर घर के भीतर एक पैकट फेंकता हुआ वह आगे बढ़ गया।

भीतर एक कोठरी में जमना गोबर लीप रही थी। डाकिये की आवाज उसने सुनी। यही वह आवाज थी जिसे बरसों की प्रतीक्षा के बाद उसने भुला रक्खा था। फिर भी पहचानने में उसे देर न लगी। एक साथ मन के किसी निगूढ़ आनन्द की बुझी बत्ती उसके रोम रोम में जाग उठी। उसका एक हाथ पानी के घड़े पर और दूसरा गोबर के ऊपर जहाँ का तहाँ रुक गया। किसी विशिष्ट पाहुने के आगमन में उसके शरीर का समस्त क्रिया व्यापार जैसे क्षण भर के लिए अनध्याय मनाने बैठ गया हो।

जिस समय वह पौर में पहुँची, डाकिया दूर निकल चुका था। गोबर लगे हाथ में केवल दो उँगलियों से पकड़ कर उसने वह पैकट देखा। यह इतनी बड़ी चिट्ठी उन्होंने लिखी है ? छाती में

बहुत बातें आ कैसे सकती थीं। यह उसने सोचा तो, परन्तु उसका मन कहीं भीतर से कह उठा—नहीं, यह वह नहीं है; वह यह नहीं है। बरसों से कभी एक कारड तक छोड़ा नहीं है, इतनी बड़ी चिट्ठी कैसे लिखेंगे? लिखना चाहें तो क्या लिख नहीं सकते? बिरादरी में आसपास उनके इतना पढ़ा-लिखा दूसरा कौन है? एक बार हठ करके मुझे भी पढ़ाने बैठे थे। सोचते सोचते जमना का गौर मुख एकाएक लज्जा से लाल हो उठा। उहँ, उनका वह पढ़ाना मेरा काम छुड़ाकर मुझे पास बिठाने का एक बहाना भर था। मैं मूरख भला पढ़ क्या सकती थी। उनकी सब बातें ऐसी ही हैं!

इसके भीतर क्या है, यह जानने के लिए उसने पैकट धीरे से दबाया। अरे यह तो कोई पोथी है, छपी हुई! इतनी बड़ी चिट्ठी उनकी हो नहीं सकती, यह उसके मन में पहले ही आ चुका था। फिर भी उसे बड़ी निराशा हुई। गीले हाथों से इसका बेठन बिगड़ न जाय, यह विचार अब उसने छोड़ दिया। रुखाई से उसे एक आले में फेककर वह झट से भीतर चली गई।

फिर लीपने के लिए बैठकर वह बहुत कुछ सोचने लगी। वे मुझे भूल गये हैं तो मैं उन्हें क्यों नहीं भूल जाती? करूँ क्या, बीच बीच में कुछ ऐसा हो ही जाता है कि बरबस उनकी याद आने लगती है। आज न जानें किसने यह पोथी भेज दी। हली मदरसे से लौटे तो उससे पूछूँ। इतनी बड़ी पोथी उसने तो कहीं से मँगाई होगी नहीं। कहीं से मँगाता तो दाम मुझसे न लेता? फिर यह है क्या?

एकाएक एक नई बात उसके भीतर टकराई। सोचने लगी,—काली माई का कलकत्ता तो बहुत बड़ा शहर है। मुझे

चौंकाने के लिए किसी छापाखाने में जाकर अपनी चिट्ठी छाप लाये हों तो ? शहर में जाकर सब शौकीन हो जाते हैं। पानी भी वहाँ का आदमी दाम देकर बोतल का पीता है। यह चिट्ठी उनकी हो तो हो सकती है। हल्ली आवे तो उससे पढ़वाऊँ। पढ़ तो लेगा ? पढ़ क्यों न लेगा। झटपट नहीं तो धीरे ही धीरे सही। परन्तु चिट्ठी उन्हींकी हो तब तो।

उसकी देह में फुरती-सी आगई। झटपट लिपाई पूरी की, मिट्टी की नाँद में गगरी का पानी उड़ेल कर झपाटे से नहा डाला और गीले केशों से पानी की बूँदे चुवाती हुई चूल्हे के पास जा बैठी।

रसोई तो तैयार हुई, परन्तु खानेवाले को घर आने की छुट्टी मिले तब ना। अब तक चिट्ठी न पढ़ी जाने का गुस्सा अब उसने मदरसे वालों पर उतारा। पढ़ाते-लिखाते खाक नहीं हैं, राई-राई से बच्चों को तीसरे पहर तक भूखे-प्यासे घेरे रहते हैं। हैं कैसे निरदई ! इसीसे आजकल के लड़के कुछ पढ़ लिख नहीं पाते।

"माँ, कहाँ हो ?"

जमना ने देखा, हल्ली आ गया है। स्याही के छिटकों से छींट बने हुए कपड़े का बस्ता बगल में दाबे है। दाँयें हाथ में काँच की एक दवात है। मुँह पर प्रसन्नता ऐसी है, मानों अभी जेल से छूट कर आया हो।

जमना ने कोठरी के भीतर से कहा—आ गया भैया, बड़ी देर कर दी। आ, रोटी तैयार है।

एक आले में पुस्तकों का बस्ता पटकता हुआ हरलाल झट उस कोठरी में जा पहुँचा। हाँ, नाम उसका हरलाल ही था। यहाँ तक कि मदरसे के रजिस्टर में भी यही दर्ज था। परन्तु

बच्चों और छोटों के सिर बड़े नाम का बोझ पसन्द नहीं किया जाता। इसीसे हरलाल के स्थान पर वह 'हल्ला' हो गया था। माँ के कान इसे सहन कैसे करते ? वह उसे हल्ली कहने लगी थी।

"चला आऊँ वहाँ ?"—हँसते हँसते हल्ली ने कहा।

पति का समाचार आना बन्द होने के बाद से जमना का आचार-विचार कुछ अतिरिक्त कड़ा हो गया था। इसीसे, हल्ली ने वैसा कहा तो, एक पैर भी आगे बढ़ने के लिए उठा लिया, परन्तु खड़ा रहा जहाँ का तहाँ ही। जमना हड़बड़ा कर बोल उठी—करता क्या है, बिना हाथ पैर धोये, बिना नहाये !

"अभी तुम कह रही थीं, आ रोटी खा ले।"

"तो क्या यह कहा था कि ऐसा ही चला आ चौके में,—नहा धोकर नहीं ?"

"नहीं माँ, सच बड़ी भूख लगी है। नहा कल लूँगा,—आज ऐसे ही खा लेने दे।"

जमना ने बात अनसुनी करके कहा—अच्छा-अच्छा, उतार कपड़े; आज जल्द नहला दूँगी।

वह जानता था, माँ जल्द क्या नहला सकेंगी; जब भी नहलाने लगें, शरीर इस तरह से रगड़ डालती हैं, जैसे रसोई का काला तवा होऊँ। बोला—तुम रहने दो, मैं आप ही नहाये लेता हूँ। और आज बना क्या है ? भाजी-रोटी ! आलू क्यों नहीं बनाये ? नहीं, आज मैं कुछ नहीं खाऊँगा। रोटी के साथ निमक की डली भी नहीं। तब देखूँ तुम क्या करती हो।

जमना ने समझा कर कहा—कल हाट में जाकर आलू ले आऊँगी, बहुत ले आऊँगी, तब करूँगी। आज की भाजी बहुत बढ़िया बनी है।

"तुमने यहीं बैठे बैठे चख ली ?"

जमना हँस पड़ी। बोली—आज मैं तुझे एक दूसरी अच्छी चीज दूँगी।

हल्ली अपनी रुचि की वस्तुओं के नाम मन-ही-मन सोचने लगा,—लड्डू, पेड़ा, जलेबी। सहसा उसकी समझ में न आया कि और क्या अच्छी वस्तु उसके लिए हो सकती है। पहेली सुलझाने के लिए चारों ओर इधर उधर उसने दृष्टि डाल कर देखा।

माँ को वह पैकट उठाते देखकर उसने सोचा, खाने की क्या वस्तु इसमें हो सकती है और क्षण भर बाद ही खिल कर बोल उठा—आ गया यह! मैं आज ही सोच रहा था कि अब तक आया क्यों नहीं है।

जमना के क्षीण आशातन्तु को एक झटका-सा लगा। शंकित होकर उसने पूछा, तू कैसे जानता था कि यह चिट्ठी आयगी ?

"चिट्ठी,—चिट्ठी किसकी आने वाली थी? यह तो पञ्चाङ्ग है, तारीखनामा समेत। मैंने तुम्हारे नाम की बैरंग चिट्ठी इसे भेजने के लिए डाल दी थी। सोचा था आ जायगा तो आ जायगा, नहीं आया तो अपना हरज क्या।"—कहकर माँ की ओर देखे बिना वह उस पैकट को लेकर उलटने-पुलटने लगा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था, इसे खोले कहाँ से।

जमना ने धमका कर कहा—"देखता समझता है नहीं और कहता है, यह नहीं है, वह नहीं है।" अब की बार चिट्ठी का नाम वह स्वयं मुहँ पर नहीं ला सकी।

बेठन फाड़ कर हल्ली ने देखा, वही चीज है जिसे वह चाहता था। उसके लिए तारीखनामा और पञ्चाङ्ग से अधिक लुभावनी थीं उसकी तसवीरें। आहा! ये महादेवजी पार्वती के साथ बैठे हैं।

देखो तो माँ, इनके गले में यह साँप कैसा भला लगता है।

हल्ली की समझ में नहीं आया कि माँ प्रसन्न क्यों नहीं हो रही हैं। इतनी बढ़िया चीज उसने इतनी दूर से मँगा ली और पैसा एक भी नहीं खरचना पड़ा, यह कम प्रशंसा की बात न थी। फिर भी माँ इसके लिए एक शब्द भी मुँह से नहीं कह रही हैं, सचमुच यह उसके सोचने की एक बात थी। परन्तु इसके लिए उसके पास अवसर न था। यह सोच रहा था, खाने-पीने की आफत से छूटकर कब वह मदरसे पहुँचे। सहपाठियों में जितने जल्द इस नये वैभव का प्रदर्शन हो जाय उतना ही अच्छा है। वहाँ किसी बेचारे के पास ऐसी एक भी सूचीपत्र की पुस्तक नहीं!

नहाने के लिए बैठ कर हल्ली यह शिकायत करना भूल गया कि पानी बहुत ठंढा है। भोजन के लिए बैठकर यह भी वह भूल गया कि आज उसकी रुचि किसी दूसरी वस्तु पर थी। और एक सबसे बड़ी बात की सुधि भी उसे नहीं हुई कि प्रतिदिन की भाँति माँ को साथ बैठने के लिए वह हठ करे।

हल्ली तैयार होकर दूसरी बेला की पढ़ाई के लिए मदरसे चला गया। जमना उस दिन निराहार रह गई।

मन में जब दुःख देवता का आगमन हो, उस समय उसका सबसे बड़ा आदर यही हो सकता है कि उसे पाकर मनुष्य अपना खान-पान तक भूल जाय। दुःख के बीच में ऐसा आनन्द न हो तो उसे ग्रहण ही कौन करे? जमना का यह दुःख नया न था। किसी बन्द पिटारी में रक्खे हुए पुराने खिलौने की तरह फिर से उसके हाथ पड़ कर वह इस समय उसके लिए नये के जैसा हो गया था। पिछली अनेक स्मृतियों की उधेड़बुन में कब सन्ध्या हो गई, इसका पता तक उसे न चला।

"माँ, माँ, अब तक दिआ क्यों नहीं उजाला ?"

वह इतनी तन्मय थी कि हल्ली की आवाज ने उसे चौंका दिया। "उजालती हूँ" कहकर वह उठ खड़ी हुई।

हल्ली ने उजाले में देखा कि जिस थाली में वह दोपहर के समय भोजन कर गया था, वह जहाँ की तहाँ वैसी ही पड़ी है। शङ्कित होकर पूछा—आज तुमने खाया-पिया नहीं है ?

"हाँ आज जी अच्छा न था। अब तेरे साथ बैठकर खाऊँगी।"—कहते कहते जमना की आँखें छलछला उठीं। बीच की इस दीर्घ वेला में कई बार उसके मन में आया था कि बहुत पहले किसी कारण से जब वह खाना छोड़ कर अलग कोठरी में पड़ रहती थी तब उसका पति उसके ससुर की आँख बचाकर उसे मनाने के लिए किस तरह चक्कर काटता था। आज तो उसे अपने आप ही मान जाना पड़ेगा। अब वह कोई छोटी बच्ची थोड़े है, जो दूसरा कोई आकर उसकी मनुहार करे !

भोजन के बाद माँ को प्रसन्न करने के लिए हल्ली वह पञ्चाङ्ग लेकर उसे दिखाने बैठ गया। उसे कुछ ऐसा लगा कि माँ का जी सचमुच अच्छा नहीं है। उसे बहलाने के लिए, बाहर जाकर खेलने का लोभ इस समय उसको छोड़ना होगा। वह अभी बालक ही है, परन्तु उसके भीतर भविष्य के पिता का बीज हो क्यों न ? यह बात जमना से छिपी न रह सकी कि मेरा ही लड़का मेरा दुःख समझ कर बड़ों की भाँति मुझे बहलाना चाहता है।

"पहले यह देखकर बताओ कि क्या है"—कहकर हल्ली ने पन्ने उलटकर एक खिलौने की तसवीर जमना के आगे कर दी।

देखकर जमना को इतना कौतुक हुआ कि अबोध बनकर न समझने का बहाना करने की बात भी उसे न सूझी। यह वस्तु

उसका पति एक बार किसी तीर्थ से लाया था। उसमें राम और सीता का अङ्कन था, इसलिए उस घर में नित्य पूजा की वस्तुओं में उसे स्थान मिल गया था। वह बोली—यह तो अपनी पूजा वाली मूरत है! सामने दसानन हैं, इसीसे सीता मैया ने उस ओर मुँह फेर लिया है। दूसरी ओर भगवान हैं, उन्हें इधर कर दो तो ये उनकी ओर घूमकर देखने लगेंगी।

"इसमें कैसे मोड़ दूँ, यह तो तसवीर है? अपने लिए मैं अलग से एक ऐसी मूरत चाहता हूँ। नहाकर नित्त चन्दन फूल चढ़ाया करूँगा। परन्तु इसमें और बहुत अच्छी चीजें हैं। तुम एक रुपया मुझे दो तो यहीं बैठे बैठे मैं बहुत-सी चीजें मँगा दूँ। देखो, देने की बात आई तो चुप्पी साध गईं?"

"इस पोथी के लिए तूने मुझसे कुछ माँगा न था, फिर यह कैसे आगई?"

"पोथी नहीं, यह सूचीपत्र है। इसके दाम नहीं देने पड़ते। लिख देने से ऐसे ही आ जाता है।"

"सत में किसी की चीज ले लेगा तू? दाम भेज देना"—कहकर जमना उठ खड़ी हुई। उसे गाय-भैंस का उसार करना था।

(२)

छः सात बरस पहले की बात है, जमना के पति वृन्दावन को शहर जाने की धुन लगी। घर की आर्थिक स्थिति बुरी न थी। गाय-भैंसें, मौरूसी जमीन और खेत पर पक्का कुआँ, यह सब एक साथ किस किसके पास होता है? उसके बूढ़े बाप को एक किसान के

लिए इससे अधिक की तृष्णा बहुत खटकी। उसने कहा—दस-बीस के महीने के लिए परदेस जाकर कुली कहलाना क्या भले आदमी का काम है ? घर की गऊमाता की सेवा तो करेंगे नहीं, बाहर जाकर दूसरों की जूती के चाकर बनेंगे। धिक्कार है अब के इन लड़कों की समझ को !

परन्तु पुराने जमाने के बाप की यह बात लड़के की समझ में नहीं आई। जमना के रोने-गाने से अवश्य एक बार वह कुछ सोचने चला। जमना रूपसी थी। उसकी गोद में एक छोटा बच्चा भी था। यह सब छोड़कर कहीं जाने की बात वृन्दावन को भी उस समय खटकी। परन्तु जिस साथी के सङ्ग जाने की पक्की कर चुका था, वह उससे क्या कहता ? मर्द होकर औरत के गुलाम बनना नामोसी की बात होती। अतएव अचानक एक दिन सबसे छिपकर रात में वह चला ही गया।

प्रारम्भ में दो चार चिट्ठियाँ उसकी आईं। कलकत्ते में एक कारखाने में उसे जगह मिल गई थी। बाप ने इस बात से मन को कुछ धीरज देना चाहा कि उसका लड़का इतनी दूर जाकर ऐसी जगह रहता है। दूर कितनी, यह वह भी नहीं जानता था। शायद वहाँ के लिए रेल-किराये के दस-पचास रुपये लगते हों। वहाँ इस गाँव का कोई आदमी सपने में भी नहीं गया। कोई गया भी हो तो वहाँ जाना एक बात है और जाकर वहीं रूप रहना बिलकुल दूसरी ! स्वयं बाप के मन में परदेस जाने के स्वप्न उठ चुके थे। वह बाहर की यात्रा कभी नहीं कर सका, परन्तु उसका बिन्दा यह गौरव पा रहा है, इसमें भी उसे ऐसा सन्तोष था, मानों पड़ोस में कहीं बरसा होने पर उसके ग्रीष्माकुल शरीर को ठंडी हवा का एक झोंका मिला हो। कुछ दिन के लिए उसे दूसरे सब काम भूल गये।

उसे नित्य ऐसे आदमियों की खोज रहने लगी, जिन्हें अपने बिन्दा की लिखी हुई शहर की अद्भुत बातें वह सुना सके।

बात चाहे जितनी अद्भुत हो, कुछ दिन में साधारण हो जाती है। वृन्दावन की दो चार चिट्ठियाँ बहुत समय तक काम न चला सकीं। उसके बाप का पहले मन टूटा, फिर एक साथ बुढ़ापे का शरीर। वह खाट पर पड़ रहा।

जमना ने ससुर की सेवा में दिन और रात की सीमा एक कर दी।

पीड़ा हठीले बच्चे की तरह है। समझा-बुझा कर किसी तरह थोड़ी देर के लिए वह वश में कर ली जा सकती है, परन्तु मौत इतनी भोली नहीं। बातों में आकर कहीं बीच में वह कैसे रुकेगी? एक दिन वृन्दावन के बाप का अन्त समय निकट आ पहुँचा।

ऊर्ध्व श्वास लेते हुए उसने जमना से कहा—बेटा, मेरे माथे पर तो तनिक अपनी हथेली रख।······आह! कितना अच्छा लगा। तेरे हाथ से उतनी ही ठंढक पहुँची, जितनी बिन्दा के हाथ से पहुँचती। वह नहीं आया, नहीं आया तो न आने दो उसको। मेरा सच्चा बेटा तू ही निकली। तू उससे जुदी नहीं है। नहीं है,—नहीं है! बेटा, घबरा मत, मैं सुर्त में हूँ। अब मेरा दुःख-दर्द सब दूर हो रहा है। अब बहुत देर नहीं है। रो मत। रोकर ऐसे समय क्या मुझे दुखी करेगी? मेरा तो बुलावा आगया, लड़के को देखना। तेरा पुण्य तुझे सुखी रक्खे!

उसी रात जमना अपने छोटे बच्चे के साथ घर में अकेली रह गई।

उसे चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई दिया। कैसे वह इस घर में निराश्रय होकर रह सकेगी? उसे जान पड़ा, मानों

उसकी समस्त बुद्धि का लोप होगया है। यह उसके ऊपर अत्यन्त घातक प्रहार था। फिर भी लड़के को देखकर उसने अपने को सँभाला। जो प्रहार पहले अत्यन्त भयंकर जान पड़ता है, वही अपनी चोट कर चुकने पर वैसा नहीं प्रतीत होता। उस समय वह एक छोटे से स्थान में मरहम पट्टी से छिपाकर रख लिया जा सकता है। जमना को भी ऐसा ही करना पड़ा।

कुछ प्रकृतिस्थ होते ही उसे मालूम हुआ कि जितना उसके घर में है, सब उसीका नहीं है। उसके ऊपर ऋण का एक बड़ा बोझ है। उस घर में इस ऋण का आगमन पहले पहल नवागत शिशु की ही तरह विशेष आनन्दोत्सव के साथ हुआ था। बच्चे निर्दिष्ट सीमा तक बढ़कर रुक जाते हैं, परन्तु ऋण को किसी सीमा का बन्धन कहाँ। वह बढ़ता जाता है, बढ़ता ही जाता है। यहाँ तक कि घर का छप्पर और दीवारें भी उसका बढ़ना नहीं रोक सकतीं। जमना को अपने ऋण का रूप तो ऐसा नहीं जान पड़ा, फिर भी वह उसके लिए बड़ा था। रहन रक्खे हुए कुएँ और खेत का छुटकारा उस समय वह नहीं करा सकी, परन्तु ढोर-डंगर देकर कुछ दूसरी रकमों पर उसने उसी समय कलम फिरवा दी।

अब उस बात को भी बहुत दिन हो गये हैं। हल्ली बड़ा होकर अब मदरसे जाने लगा है। उसके बस्ते में किताबों की गड्डी देखकर जमना भी अनुमान कर लेती है कि लड़के ने कुछ विद्या सीख ली। फिर भी इसका ठीक विश्वास तो उसे उस दिन होगा, जब उसके पति का पत्र आवे और हल्ली उसे पढ़कर सुना दे।

इस बीच में जमना के सामने अनेक प्रलोभन आ चुके हैं। वह चाहती तो अपनी उजड़ी हुई गिरिस्ती फिर से कभी की बसा लेती। उसके समाज की ओर से इस सम्बन्ध में निषेध नहीं है।

इसके लिए एक जाति-भोज कर देना ही काफी होता। इसमें उसे कोई कठिनता न थी। फिर भी इस ओर उसने दृष्टि तक नहीं डाली। मनुष्य-स्वभाव बड़ा विचित्र है। जहाँ कठिनता न हो, वहाँ उसकी सृष्टि करके वह उसीको सरल कर लेना चाहता है। ऐसी उसकी प्रकृति है, इसीसे अन्धकार का उपयोग कर सका है वह निज की आनन्द-निद्रा के लिए।

जमना अपने पति की स्मृति भुला देना चाहती है। उसे उसमें बहुत वेदना होती है। उस समय सोचने लगती है वह अपने ससुर की बात। पति से मान करने का अधिकार उसे है, ससुर की बात वह क्यों न सोचे? उनकी बात वह सोचती है और अकेले में बैठकर घन्टों सोचती रहती है। वे मुझे बेटा कहकर पुकारते थे। मरते समय भी उन्होंने मुझसे यह नहीं कहा कि मैं इसी घर में बैठी रहूँ। वे मुझे असीस गये हैं,—मेरा पुण्य मुझे सुखी रक्खे! मेरा तो कोई पुण्य है नहीं। होता तो यह सब भुगतना क्यों पड़ता। उन्हींका पुण्य मेरा सुहाग बनाये रहेगा। वे देवता के सुभाव के थे। उनकी बात झूठ नहीं पड़ सकती।

ऊपर से देखने में यह नहीं जान पड़ता कि जमना को कुछ अभाव है। वह घर का काम करती है, खाती है, पीती है और सम्भवतः भली भाँति सोती भी है। शरीर से भी वह क्षीण नहीं। हली को लेकर सब ओर से अपने मन को भर लेना चाहती है। जान पड़ता है, फिर भी, रीता रीता-सा कुछ उसके मन में है। उसके इस रीतेपन को जड़ पकड लेने वाला कोई हठीला रोग कह सकते हैं। ऐसे रोग में कभी कभी रोगी भी समझ बैठता है कि वह नीरोग है। परन्तु किसी दिन स्वच्छ आकाश में न जाने कहाँ से कौन हवा बह पड़ती है कि दबी हुई बीमारी का दौरा फिर नहीं

रुकता। ऐसा ही उस दिन जमना के विषय में भी हुआ। डाकिया उसके घर तक आया, आकर कुछ दे भी गया, फिर भी वह उसके पति की चिट्ठी न निकली। मानों भाग्य ने उस भूखी-प्यासी के सामने एक सुन्दर और स्वादिष्ट फल बढ़ा दिया था, उसे लेने के लिए वह आगे बढ़ी भी थी, तब तक निर्दय नें वह फल उसे न देकर जैसे स्वयं ही खा लिया हो।

रात को माँ की खाट से लगी हुई अपनी खटिया पर लेटे लेटे हल्ली ने फिर वही प्रसंग छेड़ दिया। बोला—मेरा पंचांग वाला सुन्दर वस्तुओं का सूचीपत्र देख कर मदरसे के लड़के वैसे ही रह गये। कैसी बढ़िया तसवीरें हैं! लड़के अपना बस्ता बड़ा बनाने के लिए गलियारे से कागज बटोर लाते हैं। कैसे गन्दे हैं, फिर भी मुझसे कहते हैं, मेरा बस्ता तुमसे बड़ा है। अब किसीके पास ऐसी पोथी नहीं निकलेगी। सब मुझसे बुरा मान गये हैं। परन्तु मैं किसीसे डरता थोड़े हूँ। हूँ! ऐसे बुरे लड़के हैं, किसीकी अच्छी चीज देख नहीं सकते!

जमना को लड़के की ऐसी आलोचना-प्रत्यालोचना में नित्य भाग लेना पड़ता था। हल्ली ने देखा वह ध्यान नहीं दे रही है, फिर भी वह कहता गया—और सुनती हो माँ, हीरा मेरा गुइयाँ छूट गया।

जमना ने कहा—किसीसे लड़ना-झगड़ना अच्छा नहीं होता। हीरालाल तो बड़ा अच्छा लड़का है।

हीरालाल जमना के महाजन मोतीलाल का लड़का है। कभी कभी हल्ली की उससे खटक जाती है। उसने कहा—अच्छा लड़का है चूल्हे का! वह अच्छा है तो झूठ क्यों बोलता है? कहता है, ऐसे सूचीपत्र हमारे घर ढेरों रक्खे हैं। ढेरों रक्खे हैं, फिर बस्ते में

लाकर क्यों नहीं रखता ? मेरे पास यह एक अच्छा-सा आ गया है सो बार बार कहता है , मुझे दिखाओ, मुझे दिखाओ । मैंने कहा, तुम फाड़-फूड़ कर आज ही पुराना कर डालोगे, मैं नहीं दिखाता । बस इसी पर गुइयाँ छूट गया है,—छूट गया है छूट जाय । मेरे दूसरे बहुत हैं ।

हल्ली ने देखा, माँ अब भी चुप हैं । वह फिर बोला—अब की बार मैं कलकत्ते का दूसरा सूचीपत्र मँगाऊँगा । वह और भी बढ़िया होगा ।

वह जानता था, कलकत्ते की चर्चा से माँ प्रसन्न होंगी । उसका अनुमान ठीक निकला । बदले हुए स्वर में जमना ने पूछा—तू मँगा सकेगा ?

हल्ली उत्साहित होकर कहने लगा—हाँ हाँ, क्यों नहीं । हमारे मदरसे के नकशे में भी कलकत्ता लिखा है । कलकत्ते में धान बहुत होती है । अच्छा, मेरा एक सवाल तुम बता सको तो जानूँ । पंजाब में क्या होता है ?—बताओ ।

जमना ने हँसकर कहा—मैं क्या जानूँ ।

"हाँ तुम बता नहीं सकतीं । बहुत कठिन सवाल है । हीरा नहीं बता सका था । तब मैंने बताया था । बड़े आदमी का बेटा बना फिरता है, लिखता-पढ़ता कुछ नहीं । इसी बात पर आज पण्डितजी ने उसे पीट दिया था ।"

"तूने पहले ही उसे क्यों न बता दिया हल्ली ? तू बता देता तो वह पिटता नहीं । और ये पण्डितजी भी हैं कैसे, जो ऐसी बड़ी बातें पूछकर लड़कों को पीटते हैं ।

"नहीं माँ, तुम जानती नहीं हो । बिना पिटे भला किसीको विद्या आती है । पण्डितजी गुरू हैं, माँ-बाप से भी बड़े हैं । वे

पीटते हैं तभी लड़के पढ़ते हैं।"

"मुझसे तो किसी दूसरे के राई-भरे बच्चे पर हाथ न उठाया जाय।"

"तुम बहुत सीधी हो, क्या बप्पा का सुभाव भी ऐसा ही था माँ ? मैंने उन्हें देखा नहीं है। बड़ा होकर उन्हें देखने कलकत्ते जाऊँगा।"

"मुझे साथ ले चलना। कहीं तू भी मुझे यहीं तो न छोड़ जायगा ?"

हल्ली ने गम्भीर होकर कहा—मैं तुम्हें वहाँ ले तो चलूँ, परन्तु औरतों का काम वहाँ नहीं है। बड़ी भीड़ होती है वहाँ। तुम न जानें कहाँ कुचल जाओ। मैं बप्पा को देखते ही अपने आप पहचान लूँगा कि ये हैं।

जमना ने पूछा—कैसे पहचान लेगा ?

"पहचान क्यों न लूँगा, सीधी-सी बात है। सभी तो कहते हैं, मेरी उनहार ठीक ठीक उनसे मिलती है। यह अच्छा होता, मेरी उनहार तुमसे मिलती। मुझे तुम बहुत सुन्दर लगती हो।"

जमना ने धमकाते हुए कहा—अच्छा अच्छा, अब सोयेगा नहीं ? सो जा बहुत देर हो गई है। न आप सोता है, न मुझे ही सोने देता है।

हल्ली मुहँ ढाँप कर चुपके-से पड़ रहा। थोड़ी देर चुप रह कर एकाएक बोल उठा—माँ तुमने हीरा की एक बात सुनी ?

जमना ने कोई उत्तर नहीं दिया। हल्ली थोड़ी देर में ही सो गया।

(३)

जमना की नींद उचटी हुई थी। उसके मन में न जानें कितनी बातें आ-जा रही थीं। जितना वह उन्हें हटाने का प्रयत्न करती, वे उतने ही वेग से और आतीं।

कोठरी का दिया नित्य के अनुसार ठंडा कर दिया गया था। कोई वस्तु वहाँ सूझती न थी। जान पड़ता था, जैसे कोठरी के बन्द साँचे में ढल कर वहाँ अँधेरे का एक बड़ा-सा चक्का जम गया है।

पास में पड़े हल्ली के खुर्राटे की आवाज सुनाई पड़ती थी और बस चारों ओर सुनसान ही सुनसान। बीच बीच में कहीं से किसी कुत्ते का भूकना सुनाई पड़ता था। उस समय ऐसा लगता था कि यह जैसे उस निस्तब्धता की ही कोई बोली हो।

जमना के जागने के लिए यह समय बहुत सुभीते का था। इस समय दूसरा कोई आकर विचारों की लड़ी नहीं तोड़ सकता। वह बरसों से अकेली पड़ गई थी, इस बात का अनुभव पूर्ण रूप से वह ऐसे ही में कर सकती है।

इधर उधर करवटें बदलते बदलते वह कब सो गई, यह उसे मालूम न हुआ। वह सो गई तब भी उसने अपने को चलते-फिरते और देखते हुए पाया।

देखने लगी कि किसी अनजान स्थान में वह पहुँच गई है। चारों ओर धान के हरे खेत लहरा रहे हैं। हल्ली कहता था, कलकत्ते में धान बहुत होता है। धान के खेत तो हैं, परन्तु यहाँ कहीं कोई आदमी नहीं है। जहाँ तक दिखाई देता है, बस हरियाली ही हरियाली है। ऐसे में वह अकेली जाय कहाँ? कोसों तक किसीके होने का चिन्ह तक दिखाई नहीं देता।

सहसा थोड़ी दूर उसे एक भेड़ा दिखाई दिया। कुछ स्त्रियाँ ऐसी सुनी गई हैं जो आदमी को भेड़ा बनाकर रखती हैं वह घबरा गई। भेड़ा गर्दन मोड़ कर जमना की ओर देखता है और झट से आगे बढ़ जाता है। उसके पीछे चलने से वह अपने को रोक न सकी। उस प्राणी में ऐसा ही कुछ आकर्षण था।

जमना चली जा रही है, बराबर चली ही जा रही है। उसके पैर दुखने लगे हैं, फिर भी बीच में वह रुक नहीं सकती। गाड़ी के पीछे रस्सी से बँधी किसी डाल की कटी हुई शाखा की तरह वह अपने आप आगे घिसटती चली जा रही है। इधर उधर की झाड़ी में उलझ कर कब उसका वस्त्र फटता है, कब शरीर में खरोंच लगती है, इसका विचार करने की शक्ति उसमें नहीं।

एक बार उसकी दृष्टि भेड़े पर से उचटी और उसी समय वह दृष्टि से ओझल हो गया। अब चारों ओर फिर वही सुनसान। इस सुनसान से अपने को वह कैसे बाहर निकाले? अब यहाँ धान के हरे हरे खेत भी नहीं रहे। यह कोई भयंकर वन है। कहानी में सुना हुआ कदलीवन। इसका तो कहीं ओर छोर ही नहीं मिलता। अपने को निस्सहाय पाकर एक जगह बैठकर वह आँसू बहाने लगी। हाय! यह भेड़ा भी अपने घर के आदमी जैसा ही निरदई निकला।

थोड़ी देर रोते रोते उसने सिर उठाया कि सामने बहुत दूर दो आदमी छाया-से दिखाई दिये। नहीं, ये दोनों पुरुष नहीं हैं। एक पुरुष है, दूसरी स्त्री। उठकर वह फिर चलने लगी।

अब उसने स्पष्ट देखा,—अरे यह तो उसका पति है! मन ही मन प्रश्न किया—साथ की यह स्त्री कौन है?

उधर उस स्त्री ने जमना की ओर उँगली करके पूछा—

इसीको ला रहे थे ? कौन है यह ?

जमना सन्न रह गई। जैसे उसकी छाती पर किसीने मनों बोझ रख दिया हो। वह चिल्ला पड़ना चाहती है, पर उसकी जीभ काम नहीं देती।

वृन्दावन ने उधर उस स्त्री से कहा—गाँव की एक औरत; वही जिसके बारे में बात हुई थी।

हाय राम! गाँव की एक औरत;—वही, जिसके बारे में बात हुई थी! जमना जोर से सिर पीटने लगी।

देख कर वह स्त्री ताली पीट कर हँसी। बोली—बड़े मजे की औरत है। यह तुम्हारे गाँव की!

वृन्दावन भी साथ साथ मुहँ फेर कर हँसने लगा।

जमना के सारे शरीर में आग-सी लग गई। इसीके फेर में पड़े हैं! इसके साथ कैसे घुल मिल कर हँसते हैं, मुझसे बात तक नहीं पूछते। छि: छि: कैसी ओछी औरत है! न रूप-रंग में अच्छी, न बातचीत में। अच्छे रंगीन कपड़े पहन लिये और समझती है, हम हैं सो कोई नहीं।

जमना झपट कर पास पहुँची कि उस स्त्री ने रूप बदल लिया। ओ मेरी मैया, इसके तो बड़े बड़े दाँत निकल आये! यह आदमी खाने वाली डायन है।

वह एक साथ जोर से चिल्ला पड़ी और उसकी आँख खुल गई।

"माँ, क्या हुआ, क्या हुआ?"—कह कर हल्ली भी अपनी खटिया पर उठकर बैठ गया।

चिड़ियाँ चहकने लगी थीं, परन्तु अन्धकार कुछ कुछ अब भी था। जान पड़ता था कि प्रभात के स्वागत में किसी अलौकिक

धूपदानी ने यह सुगन्धित धूप ही सब ओर एक-सा फैला दिया है।

लड़के को जागा देखकर जमना लजा गई। बोली—डर मत हल्ली, मैं सपना देख रही थी।

हल्ली ने विस्मित होकर पूछा—सपना देख रही थीं तो इस तरह जोर से चिल्ला क्यों उठीं ?

"ऐसा ही सपना था।"

"सबेरे का सपना सच्चा होता है। सच्चा नहीं होता है क्यों माँ ? मुझे ऐसा सपना कभी नहीं आता।"

अपने स्वप्न न आने के सोच में वह माँ से सपने का ब्यौरा पूछना भूल गया। जमना म्लान मन से कपड़े लपेट कर खाट उठाने लगी।

(४)

दिन भर जमना की छाती में बरछी-सी चुभती रही कि सबेरे के पहर का सपना सच्चा होता है। कैसा दुर्भाग्य है कि उसके लिए सपना भी सपना नहीं रहना चाहता ! चारों ओर उसके पति के सम्बन्ध में जैसी बातें सुन पड़ती हैं, उससे यह अच्छी तरह मेल खा जाता है। स्वयं जमना के मन में भी इस तरह की बातें कहीं छिपी नहीं हैं, यह भी वह कैसे कहे। उसने निरन्तर संघर्ष किया है, बाहर वालों से और अपने आप से भी, कि निन्दा की बातों पर वह ध्यान न दे। पर आज के स्वप्न का वह क्या करे ? उसने अपनी आँखों वह स्त्री देख ली है, उसकी बातें भी सुन ली हैं। वह मन ही मन पुकार पुकार कर कहने लगी—हे जगदीश

स्वामी, मेरा पहला ही दुःख क्या कम था जो यह सब सामने लाकर इस तरह दिखा दिया ? वह सब दिखाने के पहले ही मुझे अन्धी और बहरी कर देते तो कितनी अच्छी बात होती !

उसके मन में धिक्कार उठा कि इस समय तो ऐसी बातें सोच रही हूँ और उस समय उसका भयंकर रूप देख कर ही इस तरह चिल्ला उठी कि हल्ली भी जाग पड़ा। मुझे खा ही लेती तो क्या बुरा होता। मैं उससे दो बातें तो करती। स्त्री की जाति,—कहाँ तक कठोर होती। परन्तु मेरा उतना पुण्य नहीं, इसीसे उस तरह घबरा गई थी। जिनका पुण्य होता है वे यमराज के हाथ से भी अपना धन लौटा लाती हैं।

दोपहर को जब हल्ली मदरसे से लौटा तब जमना ने उससे कहा—आज संझा को रामायण सुनाना बेटा।

उसने निश्चय किया था, खूब ध्यान लगाकर वह कथा सुनेगी। मतलब समझ में न आवे तब भी हर्ज की बात नहीं है।

रामायण पढ़कर माँ को अपनी विद्या दिखाने का उत्साह हल्ली के लिए पुराना पड़ गया था। उसने बहाना निकाला—अपनी पोथी अच्छी नहीं है। उसका पुट्ठा खिंच आया है, एक एक पन्ना अलग है। उसे पढ़ने में मन नहीं लगता।

"कितनी अच्छी पोथी है, और तू कहता है पढ़ने में मन नहीं लगता ! ऐसे मोटे अच्छरों की पोथी और कहीं नहीं मिल सकती। पाँच रुपये निछावर में लगे थे।"

"पाँच रुपये ! मैं दो रुपये में सुनहरी जिल्द की ला सकता हूँ। बहुत बढ़िया, छेपक समेत, नीचे अर्थ लिखा हुआ। रामू बिसाती के यहाँ आज ही आई हैं ऐसी नई कि तुम देखती ही रह जाओ। दोगी माँ, रुपये ?"

"तू बाँचकर सुनाना कहे तो"—

हल्ली को विश्वास न था कि माँ, रुपये दे देंगी। प्रसन्न होकर उसने कहा—हाँ हाँ सुनाऊँगा, लाओ, दो।

जमना ने रुपये दे दिये। उसने सोचा, रामायणजी की पोथी के लिये दो रुपये क्या हैं। बोली—देख, गिरा न देना। देख लेना, पन्ने कटे-कुटे न हों।

मोल तोल करने की बात उसने नहीं सुझाई। रामायण का मोल-भाव नहीं किया जाता है।

हल्ली प्रसन्नता में उछलता-कूँदता चला गया।

हल्ली की प्रसन्नता देखकर जमना की आँखों में आँसू आ गये। मन ही मन उसने कहा—यह रामायणजी की पोथी के लिए कैसा प्रसन्न हो रहा है। हे महावीर स्वामी, अच्छे काम में इसे ऐसा ही प्रसन्न बनाये रखियो!

कह कर उसने अपने दोनों हाथ जोड़ कर माथे से लगा लिये।

घर में अकेली पड़कर उसका जी फिर बेचैन होने लगा। काम-कांज किसी तरह निबटा कर वह खेत के लिये निकल पड़ी।

गाँव के बाहर वह बड़ी सुन्दर जगह है। चारों ओर गेहूँ-चने के हरे हरे खेत हैं। अलसी और सरसों के नीले-पीले फूलों ने स्थान स्थान पर उस हरियाली में बेल-बूटे का काम किया है। जिस समय हवा झोंके के साथ चलती है, उस समय जान पड़ता है कि यह हरियाली भी कुछ दूर तक उसके पीछे चलेगी। इस शान्त वातावरण में जमना का जी और उदास हो गया। वह उस बँधी हरियाली की तरह ही किसी दूरगामी, अत्यन्त दूरगामी का पीछा करना चाहती है। जहाँ की तहाँ रहती है, किन्तु पीछा करना नहीं छोड़ती।

खेती दूसरे की साझेदारी में हो रही थी, यहाँ काम-काज

विशेष कुछ न था। जितना था, उसमें भी वह मन लगा न सकी।

सन्ध्या हो आई। ढोर-बछेरुओं और नंग-धड़ंग लड़के-बच्चों को आगे करके, खेतों की स्त्रियाँ काँदी-भूसे के बोझ के साथ अपने अपने घर लौट गई। चारों ओर का सूनापन अब और भी बढ़ गया है। जमना फिर भी, अपने पक्के कुएँ के घाट पर अकेली चुपचाप बैठी है।

कुएँ के पास ही आम का एक गुल्ला है। अब तक इसने फल नहीं दिये हैं। पार साल मौर कर ही रह गया था। बहुत सुन्दर है, हरे हरे पत्तों से छाया हुआ, कलश के-से सुडौल आकार वाला। उसके पीछे से छनकर तीज-चौथ की चाँदनी के छींटे जब जमना के मुहँ पर आकर पड़े तब एकाएक जैसे उसे कुछ चेत हुआ।

वह पेड़ के नीचे जाकर खड़ी हो गई। इस पेड़ के साथ उसकी एक बहुत सुखद स्मृति है। उसकी याद से उसकी आखों के आँसू गालों पर आकर नीचे टपाटप गिरने लगे। इन्हें वह देर से रोके हुए थी। आँसू भी समय-असमय की बात जानते हैं, इसीसे अब तक रुके थे। इस एकान्त में अब ये और रुकते कैसे? अब यहाँ किसीकी शंका नहीं है, लज्जा नहीं है। अब तो ये बहेंगे ही बहेंगे।

उसने सोचा,—आज बुधवार है?—हाँ, आज का ही दिन वह था। यही समय था, ऐसी ही चाँदनी थी। चारों ओर सुनसान भी ऐसा ही था, जगह भी यहाँ की यही थी। अधिक और जो था वह आज नहीं है। उस समय उसके सास-ससुर दोनों जीवित थे। उसके पति ने न जानें कैसा मेल मिलाया कि दोनों पति-पत्नी यहाँ अकेले पड़ गये थे।

वृन्दावन ने कहा—चलो, इस समय वह आम की गुठली बो दें।

पास वाले डेरे से जमना को वह जबर्दस्ती खींच लाया। वह झिझकती ही रह गई;—करते क्या हो, कोई देख लेगा!

चारों ओर सुनसान देखकर थोड़ी देर में उसकी झिझक दूर हो गई। वृन्दावन खुरपी से गड्ढा खोदने लगा और गगरी लेकर वह सींचने के लिए कुएँ से पानी खींचने लगी।

उस एकान्त में अकेली वह है और अकेला उसका पति। तीसरा कोई उन दोनों के बीच में नहीं है। बीच का संसार अपने आप सामने से खिसक गया है। ऐसे में वह दबी दबी नहीं रह सकती। विवाह के बाद अब तक घर की बन्द कोठरी में ही वह पति से मिल सकी थी। यह पहला अवसर था जब इस असीम के आनन्द का अनुभव उसे हुआ। निस्संकोच भाव से वह पति के बगल में जाकर बैठ गई।

उसके पास आकर बैठ जाने से वृन्दावन को गड्ढे खोदने के काम में कुछ सहायता पहुँची हो यह नहीं दिखाई देता। उसका हाथ धीमा पड़ गया है। एक बार खोदी हुई मिट्टी नीचे न डाल कर उसने जमना के ऊपर डाल दी। जमना ने भी अपने आँचल का छोर इस तरह फटकारा कि मिट्टी वृन्दावन के ही ऊपर पड़ी। फिर भी रोष दिखा कर वही उसे दोष देने लगी—इस तरह अनाड़ीपन से काम किया जाता है कहीं? लाओ, दो मुझे खुरपी, मैं खोदूँगी।

गड्ढा खोदकर फिर जहाँ का तहाँ भर दिया गया है, अब गुठली बोने की बारी आई।

वृन्दावन ने कहा—गुठली तुम बोओ।

जमना ने उत्तर दिया—मैं नहीं, तुम।

बोने की समस्या साधारण न थी। वृन्दावन ने कहा—यह

गुठली बहुत बढ़िया आम की है। इसके फल हम-तुम बहुत दिनों तक खायँगे। तुम्हीं इसे बो दो। स्त्री के हाथ में रसायन होती है।

जमना ने कहा—राम राम! कोई कहीं लुगाई के हाथ के लगाये पेड़ का फल खाता है?

वृन्दावन ने भी उसी तरह उत्तर दिया—राम राम! कोई कहीं लुगाई के हाथ की बनी रोटी खाता है।

जमना हँस कर बोली—नहीं, सच मेरे हाथ में कुलच्छन है। मेरे हाथ का बोया पेड़ उगेगा नहीं।

वृन्दावन ने ठोढ़ी पकड़ कर उसका मुहँ ऊँचा उठा दिया। पूरे मुख पर धुँधली चाँदनी पड़कर खिल उठी। ठोढ़ी पकड़े पकड़े उसीको उसका मुहँ दिखाता हुआ-सा वह कहने लगा—कुलच्छनी का रूप ऐसा होता है मेरी रानी?

अन्त में निश्चय हुआ, गुठली दोनों एक साथ बो दें। और इस तरह वह काम उस दिन सम्पन्न हुआ।

जमना ने उस गुठली में जिस दिन पहले पहल अंकुर देखा, उसके आनन्द का ठिकाना नहीं रहा था। तब से हृदय के सम्पूर्ण स्नेह के साथ उसने इस बिरवे का पोषण किया है। इस बीच में कितने ही उलट फेर घर में हो चुके हैं। परन्तु घोर दुःख में भी इस आम की खबर लेना वह नहीं भूली। वृन्दावन ने कई बार उससे कहा था कि इस आम के पहले फल को ठाकुरजी का भोग लगाकर तुझे दूँगा। अब इस साल इसमें पहली बार फल आने को हैं। परन्तु मुझे अपने हाथों इसका पहला फल खिलाने वाले वे हैं आज कहाँ? मुझे भूल गये हैं, भूल जावें; अपने वचन की सुध तो लें। हाय, वे क्या करें, किसीके फन्दे में पड़ गये हैं। नहीं तो क्या जान बूझ कर मुझे भूल जाते?

गुठली बोने की वह घटना इतने दिन बाद आज भी जमना ने उस पहले दिन ही की तरह आँखों के आगे प्रत्यक्ष देखी। सबके जीवन में कोई न कोई स्मृति ऐसी रहती है जो कभी पुरानी नहीं पड़ती। किसी चिरन्तन कवि की वाणी की तरह वह बार बार दुहराई जा सकती है। भाषा बदल जाती है, बदल जाय, समय वह नहीं रहता, न रहे; वह जैसी की तैसी रहती है, उसमें अन्तर नहीं आता। जमना की यह स्मृति उसके लिए ऐसी ही थी। उसमें वह ऐसी तल्लीन हुई कि उसे बाहर की कोई खबर न रही।

"यहाँ इस पेड़ के नीचे कौन है? अरे जमना,—इस समय तुम यहाँ कैसी?"

जमना ने सँभल कर देखा, सामने पगडंडी पर अजीत खड़ा है। वह लजा गई। बोली—घर लौट रही हूँ। तुम कहाँ से आ रहे हो माते?

"धनू कोरी के डेरे से लौट रहा हूँ।"—अजीत ने कहा—"जब और कहीं काम पूरा नहीं पड़ता तब अजीत माते की पुकार होती है। उसकी घरवाली पर प्रेत की छाया थी,—ऐसी कठिन जिसका ठिकाना नहीं। जितने गुनी थे सब हार गये, तब झख मार कर मेरे पास दौड़ा आया। किसीको तकलीफ हो तब काम छोड़ कर जाना पड़ता है। बेचारी की जिन्दगी थी, यही कहना चाहिए। एक दिन की देर और हो जाती तो बात मेरे काबू की भी न रहती।"

जमना धीरे धीरे उसके साथ चलने लगी। वह जानती है, गाँव में इसकी मन्त्रविद्या का बहुत मान है। स्वयं उसे इन बातों में रुचि नहीं, इसलिए सजातीय होने पर भी इसके प्रति अब तक वह उदासीन थी। परन्तु आज की दुर्भावना और दुश्चिन्ता में पड़

कर उसने इसका सहारा लेना चाहा। बोली—क्यों माते, सबेरे के पहर जो सपना हो वह सब सच्चा ही होता है ?

"होता भी है और नहीं भी होता है"—अजीत ने कहा—"पहले यह जानना होता है, सपना हुआ है किसको; और हुआ है तो कैसा हुआ। बात क्या है ?"

जमना चुप रह गई। सोच न सकी, क्या उत्तर दे। अजीत ने पूछा—वृन्दावन भैया का कोई सपना तुम्हें हुआ है ?

चन्द्रमा उतर कर वृक्षों की ओट में पड़ गया था, फिर भी दृष्टि नीचे करके ही उसने कहा—"हूँ।" जिस तिसके आगे पति की चर्चा करते हुए उसे संकोच होता है।

अजीत ने प्रसन्न होकर कहा—मैं पहले ही जान गया था। सूरत देख कर ही मन की न जान जाऊँ तो कोई कहे। मेरी एक सलाह सुनो। अब उन बीती बातों को छोड़ो। नई गिरस्ती बसाओ, तभी सुख मिलेगा। तुमने बहुत दिन तक वृन्दावन का झूठा आसरा ताका, इतना भी इस जमाने में कौन करता है।

जमना को बुरा मालूम हुआ। बोली—जीजी को मरे इतने दिन हो गये, फिर तुम्हींने अपनी गिरस्ती दुबारा क्यों नहीं बसाई ?

अजीत ने फीकी-सी हँसी हँसकर कहा—मेरी बात दूसरी है। मुझे जन्तर-मन्तर जगाने पड़ते हैं। इसमें जान तक जाने का अँदेसा रहता है। और भी—

"वह क्या ?"

"किसीके आगे दुखड़ा रोने में फायदा नहीं है"—कहकर अजीत रुक गया। जमना को चुप देखकर थोड़ी देर बाद स्वयं फिर कहने लगा—मेरे भाग का होता तो गाँठ का धन ही क्यों खोता। अब तो जो चली गई है वह चली गई। उसकी याद में ही भला

लगता है। लोग ऊपर ऊपर देखते हैं, इसीसे कहते हैं कि इसे दुख है। किसीको दुख ही दुख हो तो वह जिन्दा कैसे रहे ? किसीके यहाँ झाड़ने-फूँकने जाता हूँ तो उसके यहाँ का पानी क्या तमाखू की फूँक तक लेना पाप है। दो पहर को चूल्हा सुलगा रहा था, तभी वह पकड़ ले गया। अब घर जाकर चूल्हा क्या फिर सुलगाऊँगा ? आज तो पूरा उपास करने की सोच ली है। अनन्द इसमें भी है। सौ बात की बात एक यह है—जाही बिध राखे राम ताही बिध रहिए !

जमना का हृदय सहानुभूति से भर गया। उसके मन में भी कोई ऐसी ही बात थी। उसे प्रकट करने के लिए उसको शब्द नहीं मिलते थे। उसका हृदय उतावला होकर बार बार दुहराने लगा—आनन्द इसमें भी है, आनन्द इसमें भी है !

उसके मन में आया, अपने घर व्यालू करने के लिए अजीत से आग्रह करूँ। फिर भी संकोच-वश वह ऐसा नहीं कर सकी।

उस स्थान पर वे आ पहुँचे, जहाँ से दोनों का रास्ता जुदा था। वह बोला—तुम्हें और आगे पहुँचाने चलूँ ? उधर से ही निकल जाऊँगा। तुम्हें देर हो गई है। गाँव के बाहर इतने समय तक अकेली नहीं रहना चाहिए। आदमी सब तरह के मिल सकते हैं।

"चली जाऊँगी। आज अनोखी नहीं जा रही हूँ।"

"हाँ, उस सपने की बात रह गई। कोई बुरा सपना था ? बुरे सपने का फल भी दान-पुन्न से सुधर सकता है। लो, अब मैं जाता हूँ।"

अजीत चला गया। जमना को याद आया, हल्ली बड़ी देर से अकेला है और वह रामायण की पोथी ले आया होगा।

वह भी तेजी से आगे बढ़ गई।

(५)

उस पंचांग नामक सूचीपत्र को लेकर हली और हीरालाल में विरोध बढ़ गया है।

मदरसे की बात है। लड़के इधर-उधर अव्यस्थित रूप में थे। कोई काँच के टुकड़े से काठ की पट्टी घोंट रहा था, कोई बोरका या दवात में पानी डाल कर लौट रहा था, और कोई अपनी दवात-कलम की खोज में था। कहीं कहीं दस दस पाँच पाँच के झुण्ड लड़ झगड़ कर शोर कर रहे थे। इतने में एक लड़के ने आकर खबर दी, बड़े पंडितजी आ रहे हैं। समाचार बिजली की तरह सब लड़कों में दौड़ गया। जब तक पंडितजी मदरसे के भीतर आकर उपस्थित हों, तब तक अपने अपने स्थान पर पहुँच कर सब लड़के जोर जोर से अपना पाठ पढ़ने लगे थे।

पंडितजी ने कुरसी पर बैठ कर आगे की मेज में हाथ के बेंत से खटखटाहट की नहीं कि एक साथ सन्नाटा खिंच गया। अब नित्य के अनुसार पढ़ाई शुरू होने वाली थी, तब तक हीरालाल ने उठकर कहा—पंडितजी, यह हली मुझसे बुरी बुरी बात कहता है।

हली अपनी जगह पर बैठे बैठे बोल उठा—नहीं पंडितजी, यही मुझसे कह रहा था,—हला, गल्ला, निठल्ला।

हीरालाल ने कहा—यह सरासर झूठ बोल रहा है। यही कह रहा था,—हिरवा, चिरवा—

पंडितजी ने हाथ का बेंत मेज पर बजाते हुए दोनों को एक साथ बोलने के लिए रोका। हीरालाल आगे था, इसलिए उसीको पहले बोलने का मौका मिला। उसने कहा—पंडितजी, आपने जैसी दवाइयों का सूचीपत्र उस दिन फाड़कर फिकवा दिया था,

वैसा ही यह अपने साथ लाया है।

हल्ली उस सूचीपत्र के साथ तलब किया गया। डरते डरते पंडितजी के पास पहुँच कर उसने कहा—यह वैसा नहीं है पंडितजी।

हल्ली के हाथ से सूचीपत्र छीन कर पंडितजी ने उसे नीचे फेंका और उसके गाल में दो तमाचे जड़ दिये। बोले—दियासलाई लगाकर सूचीपत्र अभी जला दो।

कई लड़के दियासलाई लाने के लिए एक साथ इस तरह उठ खड़े हुए, मानों अभी किसी बहुत बड़ी प्रतियोगिता के खेल में भाग लेना है।

हल्ली रुआँसे मुहँ से कातर होकर कहने लगा—पंडितजी, इसमें महादेवजी की रंगीन तसवीर है।

उसमें महादेवजी की तसवीर होने के दोष पर हल्ली को एक चपत और जड़कर पंडितजी ने कहा—अब कभी ऐसी चीज देखी तो मार मार कर ठीक कर दूँगा।

हीरालाल ने समझा जीत उसकी हुई और हल्ली ने सोचा, वह हार कर भी हारा नहीं है। फिर भी उसका जी न जाने कैसा हो गया कि उस दिन वह पढ़ने में मन बिलकुल न लगा सका। सब हिसाब गलत निकलने के कारण उसे फिर मार खानी पड़ी।

छुट्टी होने पर हल्ली ने हीरालाल से कहा—आज तुम हमारी ओर खेलने आये तो तुम्हारी हड्डी तोड़ दूँगा।

"अभी शिकायत करता हूँ"—कहकर पंडितजी के पास जाने के लिए हीरालाल आगे बढ़ा। परन्तु हल्ली पहले ही देख चुका था कि वे चले गये हैं। मुड़कर हीरालाल ने कहा—मैं आऊँगा, देखें कौन रोकता है। गड़बड़ करोगे को बारंट कटाकर थाने में बन्द करा दूँगा।

घर जाकर हल्ली ने एक आले में बस्ता पटका और घर के किवाड़ बन्द करके खेल के मैदान में पहुँच गया। उसने सोचा, देखूँ हीरा कैसे आज मेरे खेल में आता है। मन की उत्तेजना में उसे इस बात की सुर्त न रही कि रामू की दूकान पर इस समय उसे रामायण की पोथी लेने जाना है। दोपहर को दूकानदार उसे मिला नहीं था, तब सन्ध्या की छुट्टी के बाद उसने फिर वहाँ जाने का निश्चय किया था।

मैदान में कई लड़के पहले ही मौजूद थे। एक लड़का कपड़े की सिली गेंद और चीड़ के पटिये का बल्ला साथ लाया था। उसने कहा—गेंद की एक बाजी खेली जाय।

दूसरी ओर कुछ लड़के मिलकर कौड़ियों का कोई खेल खेल रहे थे। उनमें जो हार रहा था, उसने पैर से कौड़ियों को ठुकराया और कहा—गेंद खेलने से कसरत होती है।

जीतने वाला प्रतिवाद करना चाहता था, तब तक तीसरे ने कहा—धरम की दाई मुण्डा देगा।

जिस लड़के को यह पुण्य-कार्य सौंपा जा रहा था, उसका मुण्डन हाल में ही हुआ था। उसकी घुँटी हुई खोपड़ी देखकर सब खिलखिला कर एक साथ हँस पड़े।

एक और लड़के ने सुझाया, ऐसी खोपड़ी पर चील झपट्टा बहुत अच्छा रहेगा।

हल्ली ने आगे बढ़कर कहा—यह सब कुछ नहीं, आओ रेल-रेल खेलें। यह मुण्डा मुण्डे डिब्बे का काम देगा।

सब लड़के उत्साह से इस नये प्रस्ताव पर एक साथ सहमत हो गये।

"सात डिब्बे की गाड़ी बनेगी,"—हल्ली ने कहा—"परन्तु

बनेगा कौन कौन ?"

डिब्बे बनने के लिए सब तैयार दिखाई दिये। इनमें से किसे चुना जाय, अब यह समस्या सामने आई। एक लड़के ने—"सवारी का डिब्बा मैं हूँ"—कह कर अपने साफे की ओर इंगित किया। वह थी उसकी सवारी!

तुरन्त चार डिब्बे सवारी के छाँट लिये गये; क्रम से पहला, ड्योढ़ा, दूसरा और तीसरा। साफ कपड़े पहने एक लड़के को—पहला दर्जा बना दिया गया, बाकी के लिए कुछ गड़बड़ पड़ी। दो डिब्बे बनाये गये माल के, जो नंगे सिर थे। और इसमें तो कुछ झंझट ही न थी कि मुण्डा डिब्बा सबके अन्त में रहेगा।

"सात तो ये अभी हो गये और इंजिन अभी बना नहीं। बिना इंजन के गाड़ी चलेगी कैसे ?"—हल्ली ने कहा—"अच्छा, टेसन मास्टर मैं न बनूँगा। आठवाँ मैं हुआ इंजिन।"

कतार बाँधकर सब सीध में खड़े हो गये। इंजिन ने मुँह से शीटी बजाई और कहा—फक्-फक्-फक्!

इंजिन चालू हो गया और गाड़ी हिली तक नहीं। इंजिन को ही डपट कर बोलना पड़ा—गाड़ी चलती क्यों नहीं; क्या खराबी है?

गाड़ी चलने लगी। थोड़ा आगे बढ़कर इंजिन रुक गया। उसने कहा—गाड़ी पीछे को लौटेगी। लैन क्लिअर नहीं हुआ है और माल के डिब्बे में माल भी नहीं लादा गया। अरजुना, अपनी गेंद लखू को दे, वह है पैटमैन। गारड साब को गेंद दी जायगी तब गाड़ी चलेगी।

उलटी लौटकर गाड़ी फिर उसी जगह आई। वहाँ दूसरे लड़कों ने जमीन पर से जैसे कुछ उठा उठा कर माल के डिब्बों में

माल भरने का-सा काम किया, गेंद पहले दरजे वाले डिब्बे ने गार्ड बनकर ली, दोनों ओर कुछ लड़के थोड़े फासिले से तार के खम्भे बनकर खड़े हुए, तब कहीं दुबारा गाड़ी रवाना हो सकी।

थोड़ी दूर चलकर फक्-फक् करना छोड़ इंजिन फिर खड़ा हो गया। पीछे गर्दन मोड़कर उसने कहा—इंजिन के अलावा दूसरा कौन फक्-फक् करता है? राधे, सीध में रहो, गाड़ी रेल की पटरी से उतरे नहीं।

सब ठीक ठाक होकर गाड़ी फिर चली और अबकी बार चलकर दौड़ने लगी। गाड़ी के दोनों ओर तार के खम्भे वाले लड़के भी हो-हल्ला करके साथ साथ दौड़ रहे थे।

"टेसन जब्बलपुर! गाड़ी पाँच मिनट ठहरेगी।" बगल के एक लड़के ने कहा। गाड़ी रुकी और आध मिनट में ही पाँच मिनट पूरे करके फिर दौड़ने लगी। जबलपुर के बाद आया लखनऊ, फिर लाहौर। लाहौर से आगे बढ़कर एक दम दिल्ली जाकर गाड़ी रुकी! यहाँ उसे पूरे चौबीस घण्टे रुकना पड़ेगा। अब तक उसने बहुत बड़ा चक्कर काट लिया था।

सहसा हल्ली ने कहा—दिल्ली नहीं, यह टेसन कलकत्ते का है।

"हाँ हाँ, कलकत्ते का है। गरमागरम दाल-रोटी-बिसकुट! बनारस के अमरूद!" आदि की आवाजें आने लगीं।

हल्ली ने इंजिन वाले की हैसियत से हुक्म दिया—बाजार जाकर जिसे जो कुछ खरीदना हो, खरीद लावे। गाड़ी यहाँ बहुत रुकेगी।

गाड़ी तितर-बितर हो गई। कोई कहीं, कोई कहीं जाकर इच्छानुसार घूमने लगा। हल्ली ने अकेले पड़कर वेदना के साथ मन में कहा—मुझे तो कुछ लेना-देना है नहीं, मैं बप्पा को ढूँढूँगा। बाप का पता लगाने में माँ की करुण मूर्त्ति ही बार बार उसकी

आँखों के आगे आने लगी।

थोड़ी देर में फिर सब लड़के इकट्ठे हुए तब हल्ली ने देखा, हीरालाल भी वहाँ मौजूद है। उसका जी बुझा-बुझा हो रहा था, अब उसने फिर गरमी पकड़ ली। बोला—खबरदार, जो तुम मेरी रेल के पास आये!

उसने कहा—आता कौन है! छिः छिः, रेल-रेल कहीं ऐसे खेला जाता है? पुरखों ने सात जनम में कभी देखी हो तब तो—

हल्ली उसे मारने के लिए लपका। कई लड़के मुश्किल से बीच-बचाव कर सके।

गाड़ी फिर रवाना होकर अगले किसी स्टेशन पर ठहरी तब एक लड़के ने आवाज लगाई—चाय गरमागरम! गरम चाय खरीदने के लिए हल्ली ने जेब में हाथ डाला कि जड़ मूर्त्ति की तरह वह जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया। थोड़ी देर बाद उसके मुहँ से निकला—अरे मेरे दोनों रुपये कहाँ गये!

रेलगाड़ी का समस्त संगठन भंग करके लड़कों ने आस-पास भीड़ लगा दी। एक साथ अनेक प्रश्नों का उत्तर देना उसके लिए असम्भव हो गया। हीरालाल भी उस भीड़ में घुस आया था, उसने पूछा—कैसे रुपये, कहाँ से आये थे।

हल्ली बिगड़ पड़ा—रुपये और कैसे होते हैं,—क्या तुम्हारे बाप के थे, जो पूछने आ गये?

उसने शान्ति से उत्तर दिया—नाराज क्यों होते हो? मैं तो इसलिए पूछ रहा था कि तुम जैसे गरीब लड़के के पास रुपये आ कहाँ से सकते हैं। जमना काकी या और किसी के चुराये होंगे। बुरे की सजा भगवान हाथों हाथ देते हैं। जाकर मैं अभी काकी से कहता हूँ।

वह झंझट दूर होने पर लड़कों ने इधर-उधर खोज शुरू की। हल्ली ने बताया—जब मदरसे पहुँचा तब तो रुपये जेब में थे, बाद की खबर मुझे नहीं है।

"मदरसे में ही तो किसीने नहीं उड़ा दिये? तुम्हारी जेब. वहाँ एक बार खनकती मैंने सुनी थी। यह हीरा बड़ा बदमाश है, देखो कैसा हँस रहा था।"—एक लड़के ने कहा।

हल्ली बोला—यहाँ तो अच्छी तरह देख लो।

उसकी रेलगाड़ी दिल्ली, लाहौर, और न जानें कहाँ कहाँ घूम फिरी थी। इन स्थानों में रुपयों का खोज निकालना सम्भव न था। भरसक प्रयत्न करके सब लड़के म्लान मन से अपने अपने घर लौटे। एक लड़के ने कहा—सरकार के यहाँ दो रुपये रेलगाड़ी के टिकट में गये।

हल्ली सिर नीचा किये चुपचाप अपने घर की पौर में जाकर खड़ा हो गया। आँगन में माँ के पास एकाएक जाने की हिम्मत उसकी नहीं हुई।

जमना खेत पर से अभी अभी लौटी थी। अपने मुहल्ले में पहुँचते ही हल्ली के रुपये खोने का समाचार उसे मिल गया था। आँगन के आले में मिट्टी का दिया रखकर वह उसकार रही थी कि पौर में उसे हल्ली के पैर की हलकी आहट सुनाई दी। यह स्वर उसका चिरपरिचित है, किसी हालत में इसे पहचानने में वह भूल नहीं कर सकती। वहीं से हल्ली के विषाद भरे चेहरे की कल्पना करके उसका हृदय व्यथित हो उठा। मृदु कण्ठ से उसने कहा—कौन है, हल्ली?

वह जहाँ का तहाँ खड़ा रहा, कोई उत्तर उसने न दिया। तब जमना ने वहीं पहुँच कर पूछा—हल्ली, रुपये खो गये क्या?

यह स्वर तो नाराजी का नहीं है। हल्ली ने अभी कुछ देर पहले सोचा था कि यदि माँ नाराज होंगी तो मैं बिगड़ कर कहूँगा—क्या मैंने जान बूझ कर गिराये हैं ? इतना नाखुश होती हो तो तुमने मुझे दिये ही क्यों ? परन्तु माँ का स्वर तो यह वैसा नहीं है। वह बोला—"माँ"—और आगे कुछ न कह सका।

जमना ने कहा—गिर गये सो गिर गये, परन्तु बेटा, रुपया-पैसा सँभाल कर रक्खा जाता है।

हल्ली दीन नहीं पड़ना चाहता था। वह हीरालाल को दिखा देना चाहता था कि मुझे किसीकी परवा नहीं है। परन्तु माँ के इस प्यार के सामने तो झुके बिना नहीं रहा जाता। वह सिसक सिसक कर रोने लगा।

जमना ने दोनों हाथों से खींचकर उसे गोद में चिपका लिया। बोली—रो मत बेटा, कल तेरे साथ पोथी लेने मैं आप चलूँगी।

मन ही मन वह कह रही थी—दो रुपये खो गये तो खो गये। जिन्दगी में न जानें कितना क्या खो जाता है। आनन्द इसमें भी है, आनन्द इसमें भी है।

(६)

सबेरे मदरसे जाने के समय हल्ली ने कहा—आज पढ़ने न जाऊँगा। कारण पूछे जाने पर उसने कहा—पंडितजी मारेंगे।

"पंडितजी मारेंगे क्यों, जब अपना पाठ अच्छी तरह सीखेगा।"

"कल मुझसे रुपये खो गये, कहेंगे, क्यों खोये ?"

"चल, साथ चलकर मैं कह आऊँ कि मारें नहीं।"

"आज मैं नहीं जाता माँ। तुम्हारे साथ चलने से पंडितजी और चिढ़ जायँगे।"

"तो फिर आज यहीं बैठ कर पढ़।"

घर बैठ कर पढ़ने में हल्ली को कोई आपत्ति न थी। वह जानता था, माँ पढ़ने के लिए कहेंगी, पढ़ाने की विद्या उनके पास नहीं है। विद्या से उसका मतलब था पण्डितजी के हाथ की छड़ी का। लड़कों ने यही इसका नाम रख छोड़ा था।

मदरसे जाने से छुट्टी पाकर हल्ली को जान पड़ा कि दो रुपये देकर उसने आज का दिन खरीदा है! परन्तु थोड़ी देर बाद ही वह उसे खटकने लगा। मदरसे जाये विना वह अपने साथियों को खबर कैसे दे सकेगा कि रात में उसे मार नहीं खानी पड़ी। सबके सब कहते थे, माँ बहुत मारेंगी। मारेंगी कैसे, क्या मैंने जान बूझ कर नुकसान किया है?

साथियों तक सत्य का यह प्रकाश पहुँचाने के लिए उसने झट-से कुछ आत्मत्याग करने का संकल्प कर डाला। बोला—पहले मुझे कलेवा कराओ, तब दूसरा कुछ करो। मदरसे के लिए देर हो रही है।

जमना ने कहा—अभी तो कहता था, आज न जाऊँगा। हल्ली ने गम्भीर होकर उत्तर दिया—विना जाये कैसे चलेगा? अच्छे लड़के मदरसे जाने से जी नहीं चुराते। डिप्टी साहब इम्तिहान के लिए चाहे जब आ सकते हैं।

जमना को अपने लड़के के अच्छे होने में कोई सन्देह न था। ढोरों में चरने के लिए छोड़ने को गाय की रस्सी वह खोल ही रही थी, उसे जहाँ की तहाँ लपेट कर पहले वह लड़के को कलेवा कराने चली।

बच्चों की खोपड़ी किसी तरल पदार्थ की बनी होती है, इसीसे पानी पर मारे गये थपेड़े की तरह चोट का असर प्राय: उस पर नहीं होता। बच्चों के मन की दशा भी बहुत कुछ वैसी ही है। कोई कष्टकर बात वहाँ बहुत देर तक नहीं टिक पाती। कलेवा करते समय हल्ली को देखने से यह नहीं जान पड़ता था कि कल उसका कुछ खो चुका है। उसने पूछा—हीरा तुम्हारे पास आया था माँ ?

"कब ?"

"यही, जब मेरे रुपये गिर गये थे। नहीं आया ?—कहता था, मैं अभी जाकर काकी से कहता हूँ।"

जमना ने उकता कर कहा—मुझे नहीं मिला। जल्दी से खाले, मुझे गाय छोड़ने जाना है।

माँ की इस बात पर ध्यान न देकर वह हीरालाल का ही किस्सा सुनाने लगा। बोला—इस हीरा की बातें सुनो, तब जानोगी यह कैसा है। जब तुम्हारे पास आता है तब बेटा-बेटा कह कर प्यार से पास बिठाती हो। उसकी तो अच्छी तरह खबर लेनी चाहिए। कल उसने पंडितजी को मुझ पर नाराज करा दिया। अब मैं भी उसकी शिकायत करूँगा। छोड़ँगा नहीं।

जमना ने कहा—वह मोतीलाल चौधरी का लड़का है, तू उससे लड़ता क्यों है। बहुत रुपये उनके हमें देने हैं।

हल्ली ने विस्मय से कहा—कौन लड़ता है,—मैं ? कभी नहीं। अरजुना से पूछ देखो। उनके रुपये देने हैं तो दे देंगे। वह ऐंठ दिखाएगा तो ठीक कर दूँगा। तुम उसे प्यार करने लगती हो तो डर कर थोड़े करती हो। तुम्हारा सुभाव ही ऐसा खराब है।

जमना हँस दी। हल्ली कहता गया—उस दिन जब सूची-

पत्र की पोथी आई, तब तुमने कहा था—इसके पैसे मुझसे लेकर भेज देना। यह मैं अरजुना को सुना रहा था, हीरा बीच में आकर कहने लगा—तुम मूरख हो, मैं होता तो माँ से पैसे लेकर मिठाई उड़ाता और कह देता भेज दिये दाम। यह ऐसी सिखापन देता है हमें। सच मानो माँ, किसी दिन यह अपने सगे बाप को धोखा देकर थाने में बन्द होगा।

जमना ने कहा—तू बैठकर कलेवा कर, मैं गाय ढील आऊँ।

वह बोला—मैं कर चुका, अब भूख नहीं है।

जमना उठने को हो रही थी, फिर बैठ गई। बोली—भूख कैसे लगे, तेरी बातें तो रुकें। ले मैं बैठी हूँ, अच्छी तरह खा ले। मदरसे से तीसरे पहर छूट पाता है, तब तक तो मुझसे भी नहीं रहा जाता।

आत्मविश्वास से प्रसन्न होकर हल्ली कहने लगा—मैं बिना कलेवा किये तीसरे पहर तक रह सकता हूँ। न मानो तो होड़ बद कर देख लो। मेरा मन करता है, तुम्हारी तरह मैं भी बिना नहाये कभी कुछ न खाऊँ।

जमना ने इसका प्रतिवाद अनावश्यक समझ कर उसकी थाली में बिना पूछे कुछ और परोस दिया।

हल्ली ने हँसकर कहा—अभी मैं सेर भर और खा सकता हूँ। इस समय वह यह भूल गया कि अभी अभी वह भूख न होने की बात भी कह चुका है।

थोड़ी देर चुपचाप खाते खाते वह बोल उठा—माँ, तुम्हें मालूम मेरे रुपये क्यों खोये? यह भगवान ने ही मुझे सजा दी है। मैंने बप्पा के पाठ की पोथी की निन्दा की थी। अब मैं नई पोथी न लूँगा। पाठ के लिए घर की पोथी ही ठीक है।

इसके बाद ही उसने कल वाले खेल का प्रसङ्ग छेड़ दिया। बोला—कल मैं रेल-रेल खेल रहा था। दूसरे लड़कों ने कहा—यह टेसन दिल्ली का है; मैंने कहा—नहीं, कलकत्ते का। और सब तो सौकीनी की चीजें खरीदने लगे, मैं अकेला पड़ा तो मुझे बप्पा की याद आगई। मेरा मन न जानें कैसा क्या करने लगा। बप्पा भी न मिले और रुपये भी खोये, कल ऐसा हुआ।

जमना मुहँ फेर कर एकदम वहाँ से उठकर चली गई। यह लड़का ऐसी बातें करता है कि रोये विना नहीं रहा जाता। इस बार और बैठने के लिए उससे हल्ली ने भी नहीं कहा।

(७)

दो तीन दिन बाद जमना अपनी पौर में दरवाजे की ओर पीठ किये कुछ काम कर रही थी। किसीकी आहट से चौंक कर उसने देखा—अजीत है। माथे पर धोती का किनारा कुछ आगे खींचती हुई वह सँभल कर खड़ी हो गई।

अजीत ने पूछा—क्या हो रहा है? जमना ने कुछ उत्तर नहीं दिया। अजीत को भी उसकी कुछ बहुत आवश्यकता दिखाई न दी।

पौर में दरवाजे तक आधे हिस्से में एक चबूतरा है, जिसकी एक भुजा पताका की डंडी की तरह दरवाजे के सामने तक फैली है। दरवाजे से भीतर जाते हुए दाँयें ओर चबूतरे में एक आला है, इसमें किसी समय तमाखू का सामान और उसके नीचे ही आग की अँगीठी रहा करती होगी। इस स्थान ने निरन्तर लिप-पुत कर पहले की इस स्मृति का चिन्ह तक अपनी छाती पर से दूर

कर दिया है। उस आले के पास ही नीचे पैर लटका कर अजीत चबूतरे पर बैठ गया।

वह बोला—मैं बाहर गया हुआ था, आज ही लौटा हूँ। सुना, हल्ली ने कुछ रुपये खो दिये, यह तो बहुत बुरी बात है। कैसे खोये, क्या बात हुई ?

जिस तिसको कैफियत देते देते जमना तंग आ गई थी। फिर भी शान्ति पूर्वक उसने कहा—लड़का है, जानें क्या हुआ ?

"वह लड़का है, पर लड़कपन इसमें तुम्हारा है। ऐसे बच्चों के हाथ में रुपये कहीं दिये जाते हैं ?"—अजीत ने कहा।

जमना हँस दी। मीठी झिड़की देकर अजीत फिर कहने लगा—तुम हँसती हो, यह और बुरी बात है। यह लड़कपन नहीं है तो क्या है, तुम्हीं बताओ। भूल तुमने की और मार खाई हल्ली ने। कहीं ऐसा होता है ! मैं होता तो लड़के को न पीट कर तुम्हारी खबर लेता। हम लोग कहीं के राजा-नब्बाब नहीं हैं, जो इस तरह लड़कों के हाथ रुपये बरबाद कराते फिरें।

जमना गंभीर हो गई। यह जिस अधिकार के स्वर में बात कर रहा है वह उसे अप्रिय जान पड़ा। पर इन बातों में उसे कुछ ऐसा पकड़ाई न दिया जिसे लेकर वह अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर सके। जैसे किसी पहाड़ी सरोवर को दूर से देखक पहले उसे उसके मलिन और दूषित होने का भान हुआ, किन्तु अंजलि भर कर देखने पर फिर उसने सन्तोष कर लिया हो। वह चुप रह गई।

अजीत ने प्रसंग बदल कर कहा—कैसा साफ-सुथरा घर है ! इतनी सफाई तो बाम्हन-ठाकुरों के यहाँ भी नहीं देखी। आदमी जब निठल्ला होता है, तब करे क्या। गोबर से घर लीप-पोत कर ही समय काटे। यहाँ आकर ऐसा लगता है,

जैसे दिवाली आने वाली हो। पर कुछ हो, इतना बड़ा घर अकेले अकेले भूतखाने जैसा लगता होगा। लगता है ना ?

जिस घर में हली रहता है उसे यह भूतखाना सोचता है ! जमना ने बहुत चाहा फिर भी अपने को रोक न सकी। बोल उठी—यही भूतखाने की सराप देने आये थे ?

जमना का मुख क्रोध से तमतमा उठा; किसीने जैसे सोने को आग से तरल कर दिया हो।

सोना गरम हो या ठंढा, रहता सोना ही है। अथवा यह भी कह सकते हैं कि तरल होकर सोने की विशुद्धता ही बढ़ती है। इसीसे जमना के क्रोध का अजीत पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा। शान्त भाव से उसने कहा—जमना, सराप की बात नहीं है। मुझे अपने भूतखाने की याद आ गई थी।

अहेरी निशाना मार चुकने के बाद ही बहुधा जान जाता है कि उसकी गोली बहक गई या ठीक-ठिकाने जाकर लगी। जमना ने अजीत की ओर देखा नहीं, फिर भी उसने जान लिया कि अजीत पर उसके क्रोध ने चोट नहीं की। कहीं के किसी निर्दोष प्राणी को बाल बाल बचाती हुई गोली के निकल जाने से जो अनुताप मिश्रित हर्ष गोली चलाने वाले को होता है, वही जमना को हुआ।

अजीत के लिए जमना के मन में उस दिन खेत से लौटते हुए आदर-भाव आ गया था। कितनी ही वार वह उसकी एक बात—"आनन्द इसमें भी है !"—मन्त्र की तरह जप चुकी थी। उसमें और कुछ अच्छा है या नहीं, यह देखना अब वह नहीं चाहती। खान की मिट्टी में से सोना निकलता है, इसलिए सोने को मिट्टी कहकर वह कैसे फेंक दे ? अजीत स्वयं खरा न हो, पर उसका दिया-

मन्त्र खरा है। इसीसे क्रोध में वैसी बात उसके लिये निकल जाने से जमना तुरन्त अपने आप लज्जित हो उठी थी। उसकी यह लज्जा उस समय और बढ़ गई जब स्वयं अपने घर के लिए अजीत ने भूतखाना कह दिया।

कुछ ठहर कर अजीत ने पूछा—उस दिन जैसा बुरा सपना फिर तो नहीं दिखाई दिया ?

जमना ने जो सपना देखा था, उसे अपने मन में ही रखना चाहती थी। परन्तु इस समय उसकी चर्चा छिड़ जाने से भी उसे अच्छा लगा। वह बोली—नहीं दिखाई दिया।

अजीत ने गम्भीर होकर दुःखित के-से भाव से कहा—यह अच्छाई का लच्छन नहीं है। सपना झूठा होता है तो उसीसे मिलते-जुलते तीन सपने एक महीने के भीतर और दिखाई पड़ते हैं। दिखाई न पड़ें तो पहले वाला सच होता है। जो झूठा हो वही अपनी बात बार बार दुहराता है। सच की एक को छोड़ दूसरी बात नहीं होती।

उस स्वप्न की सचाई के बारे में जमना को भी कुछ कुछ विश्वास-सा था। उसे चिन्तित देखकर अजीत ने कहा—जमना, इसके लिए तुम डरो मत। गुरूजी की कृपा से सपने का बुरा फल बदला जा सकता है। वह मैं सब ठीक कर दूँगा। परन्तु इस समय मैं एक दूसरे बहुत जरूरी काम से आया था।

सुनने के लिए उत्सुक होकर जमना चुपचाप खड़ी रही। अजीत भी चुपचाप कुछ सोचने लगा। इसी बीच में नीचे के ताक से कुछ आवाज सुनकर वह चौंक पड़ा। उतर कर दोनों हाथ धरती पर टेकते हुए ध्यान से उसने ताक के भीतर कुछ देखा और तुरन्त बोल उठा—अरे इसमें नाग है !

जमना एकाएक घबरा गई। कहने लगी—अरी मैया री, यह कहाँ से आ गया! इस ताक में हल्ली के खेलने का काठ-कबाड़ रहता है। ऐसे में कहीं इसमें वह हाथ डाल देता तो क्या होता?

थोड़ी देर बाद मुहल्ले के तमाम लोगों के सामने अजीत ने उस काले साँप को मारे बिना जिस होशयारी से पकड़ कर मिट्टी के घड़े में बन्द कर लिया, उसे देखकर जमना वैसी ही रह गई। इस गड़बड़ी में वह यह भूल गई कि अजीत इस समय किसी दूसरे आवश्यक कार्य से आया था।

(८)

मदरसे से आने पर हल्ली को इस बात का बड़ा खेद हुआ कि घर में हो जाने वाले उस कौतुकपूर्ण काण्ड को वह स्वयं अपनी आँखों नहीं देख सका। साँप कितना बड़ा था, कहाँ से आया, उसमें कितना विष था, ऐसे अनेक प्रश्नों की उसने झड़ी लगा दी। उस साँप के कारण हो सकने वाली दुर्घटना के कल्पित भय से जमना अब भी घबरा रही थी। इसीसे बार बार वही चर्चा छेड़ने के लिए वह हल्ली पर बेतरह झुँझला उठी।

हल्ली नीचे बैठकर उस ताक में ध्यान से देख रहा था कि साँप ने अपना बिल कहाँ बनाया होगा। कहीं कुछ न दिखाई देने पर उसने भीतर हाथ डाला ही था तब तक भीतर से जमना ने उसे देख लिया। एक हाथ से अपनी ओर घसीट कर उसने उसके एक थप्पड़ जमा दी। बोली—इसमें हाथ क्यों डालता है रे!—उसे ऐसा भय लगा, मानों अब भी इसमें वही साँप बैठा है।

हल्ली ने हँसकर कहा—इतना डरती क्यों हो माँ? महादेवजी

तो अपने गले में साँप का गुलूबन्द लपेटे रहते हैं।

उसकी बात अनसुनी करके जमना ने कहा—खबरदार जो अब कभी ऐसी जगह हाथ डाला।

हल्ली बोला—मैं यहाँ होता तो उसे दूध पिलाता। कटोरी में वह अपनी छोटी-सी जीभ से लप-लप करता हुआ दूध पीता। उस समय कितना भला मालूम होता, वाह!

जमना अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए वहाँ से हट गई।

थोड़ी देर बाद हल्ली अजीत का हाथ पकड़े हुए आकर बोला—काका कहीं जा रहे थे, मैं इन्हें पकड़ लाया हूँ। कहानी सुनूँगा।

जमना को याद आया सबेरे जिस काम के लिए आये थे, उसीके लिए अब भी आ रहे होंगे। मैं तो भूल ही गई थी। झट-से उठ कर उसने चबूतरे पर बाँस की एक चटाई बैठने के लिए डाल दी।

अजीत के नीचे लटके हुए पैरों से लिपटकर हल्ली बात करने लगा। उसने पूछा—उस साँप को मार डाला काका?

"जङ्गल में दूर छोड़ आया हूँ बेटा। मैं मारता नहीं।"

"तुम्हें काटता नहीं?—मन्त्र से बस हो जाता है?"

"हाँ, मन्त्र से बस हो जाता है। परन्तु कहीं ऐसा भी होता है कि किसी किसी पर कोई भी मन्त्र काम नहीं करता।"—कह कर अजीत ने तिरछी दृष्टि से जमना की ओर देखा। वह दूसरी ओर मुँह करके देखने लगी।

अजीत की पिछली बात पर ध्यान न देकर हल्ली बोला—तुम मुझे अपना मन्त्र-जन्त्र सिखा दो काका।

"सिखा दूँगा जब बड़े हो जाओगे।"

"कितना बड़ा, तुम्हारे जितना ?"

इस ओर से असफल होकर वह कहानी कहने के लिए अनुरोध करने लगा। उसके बार बार हठ करने पर अजीत ने कहा—लो सुनो। एक गाँव में एक इस्त्री रहती थी।

हल्ली ने कहा—हूँ।

"वह इस्त्री देखने में ऐसी थी जैसे किसी राजा की बेटी हो। परन्तु एक ऐब उसमें बहुत बड़ा था। जो हठ वह पकड़ लेती उसे छोड़ना न जानती थी।"

"मूरख होगी ?"

"यह मुझे नहीं मालूम। तो हाँ, उसके था एक लड़का।

"कितना बड़ा ?"

"तुम्हारे जितना ही। वह बड़ा समझदार था। कभी किसीको तंग न करता कि कहानी कहो।"

विरक्त होकर हल्ली कुछ कहना ही चाहता था, तब तक अजीत ने आगे कहा—और लोग उसे हल्ली हल्ली कहा करते थे।

मुहँ फेर कर हल्ली ने कहा—जाओ मैं नहीं सुनता। कहानी न सुनाकर तुम तमासा करते हो। इस समय तुम्हारा मन नहीं है, परन्तु कल मैं तुम्हें छोड़ूँगा नहीं।

वह वहाँ से चला गया।

थोड़ी देर चुप रह कर अजीत बोला—तुम बुरा मान रही होगी कि मैं किसी बुरे मतलब से तुम्हारे पास आता हूँ।

जमना चुप बनी रही।

अजीत ने फिर कहा—मेरा यहाँ आना तुम बुरा ही समझती हो, पर मैं नहीं समझता। ऐसा होता तो सबेरे का साँप मुझे डस लेता। फिर भी तुम कहो तो न आया करूँ।

कातर होकर जमना कह उठी—मैंने कब कहा है कि न आया करो।

"तब ठीक है। मैंने सोचा था, तुम रोक दोगी तब भी न रुकूँगा। मेरे मन में कोई पाप नहीं है, तब डर काहे का। मैंने तुमसे फिर घर बसा लेने के लिए कहा था। उसमें कुछ बुराई नहीं है। अपने यहाँ बाप-दादों के यहाँ से होता आया है।

सबेरे की घटना के कारण जमना का हृदय कृतज्ञता से भरा था। बार बार सोच कर वह काँप चुकी थी कि यदि आज उस समय ये न आते तो न जानें कैसा अनर्थ हो जाता। इसीसे अजीत की बात का कोई कड़ा उत्तर वह न दे सकी। वैसे ऐसी बात के विषय में वह असहिष्णु हो गई थी।

जमना ने कहा—सबेरे कोई जरूरी बात कहने आये थे?

"उसीके लिए इस समय भी आ रहा था। कोई भले भूल जाय, भूलने वाला मैं नही हूँ। ऐसी ऐसी बातें मुझे याद रह जाती हैं"—

"बात क्या थी?"

"कौन बात?—अच्छा वह,—वही तो कह रहा हूँ। मैं इस बीच में सदर गया हुआ था। थानेदार बहुत भले आदमी हैं, बहुत मेहरबान हैं। कोई पेचीला मामला आता है तो मुझे छोड़ते नहीं हैं। फौरन कानिस्टबिल को हुकुम करते हैं,—जाओ माते को हमारा सलाम बोलो! इसीसे इस बार भी उनके साथ जाना पड़ा था। वहाँ हलवाई की दूकान पर पूरियाँ खाकर—मिठाई अच्छी नहीं लगती, इससे पूरियाँ ही खाता हूँ—मैं कचहरी की ओर झपाटे से जा रहा था, तब तक बड़े बाजार के चौमुहाने पर मुझे जगराम मिल गया।"

जमना चौंक पड़ी। जगराम उस व्यक्ति का नाम था जिसके साथ वृन्दावन परदेस भागा था। वह बोली—जगराम नयेगाँव वाले ?

"हाँ, वह नहीं तो और कौन ? अब वह बाबू हो गया है। जानती हो बाबू कैसा होता है ? हाथ-पैर बेंत की छड़ी जैसे, मुंह चुसी हुई आम की गुठली-सा, खुली लाँग की बगबगी धोती पर कमर तक काले रंग का बण्डा कोट पहने। कोई कैसा ही स्वाँग भर ले, पर मैं ऐसा नहीं हूँ कि वह मेरी आँख में धूल डाल सके। देखते ही दूर से मैंने पहचान लिया—जगराम है। शिबू बोला, जगराम नहीं है। तब मैंने उसका नाम लेकर पुकारा। वह तुरन्त मेरे पास आ गया।"

जमना ने पूछा—फिर कुछ बात हुई ?

"बात नहीं हुई तो पुकारा किसलिए था। कहता था, वहाँ का हवा-पानी माफिक नहीं बैठा, इसलिए यहीं आगया हूँ। बाबू लोग होते ही ऐसे हैं। तनिक-सी हवा में उड़ जायँ और डूबने के लिए भी उन्हें कोई गहरा पानी न चाहिए; फिर वहाँ तो जहाँ देखो वहीं जलकल की मोटी धार टूटती रहती है।"—कहकर अजीत हँसने लगा।

जमना को इस समय यह हँसी बहुत बुरी लगी। बोली—उनके बारे में बात नहीं हुई ?

"किनके, बिन्द्रावन के बारे में ? समय ही कहाँ था। साढ़े दस बज चुके थे और कचहरी खुल जाती है ठीक दस बजे।"

जमना क्षुब्ध होकर बोली—तुम्हें दूसरे की क्या फिकिर। मैं आप जाकर सब पता ले आऊँगी।

"मुझे किसीकी फिकिर नहीं है ? तो मैं उसे पास बुलाता ही

क्यों ? बिन्द्रावन के बारे में बात छिपी ही कौन सी है, जो मैं उससे पूछता फिरता । तुम्हींसे एक सवाल करता हूँ । बताओ, वे अब तक जीते होते तो जगराम के साथ दिखाई क्यों न दिये ? बेईमान, दूसरे को अपने साथ मरने के लिए ले गया और आप अकेला लौट आया है । तुम सब जानती हो । सपने में—

जमना बैठी थी, उठकर खड़ी हो गई । भौंह तानकर उसने कहा—फिर वैसी ही बात ! तुम चाहते हो, सब कोई मर जायँ तब मैं तुम्हारी बाँदी हो जाऊँगी । मैं इतनी नादान नहीं हूँ जो कुछ न समझूँ । परन्तु तुम भी समझ लो, इस तरह बुरा ताकने से किसीका सत्यानास नहीं होता ।

तेजी में हाथ की चूड़ियाँ खनका कर वह झट-से भीतर चली गई ।

अजीत चुपचाप जहाँ का तहाँ बैठा रहा । थोड़ी देर बाद भीतर के दरवाजे के पास जाकर उसने कहा—तुम नाराज हो गई हो जमना, परन्तु इसमें नाराज होने की कोई बात न थी । मैं सोचता था, जगराम की कही हुई बातें तुम्हें क्यों अपने मुहँ से सुनाऊँ ? फिर भी तुम कहती हो, मुझे किसीकी फिकिर नहीं है ! जगराम को लिवा लाकर यहाँ खड़ा कर दूँगा, तब तो मानोगी ?—तो अब जाऊँ ?—

भीतर से जमना का कोई उत्तर नहीं मिला । वहाँ वह कपड़ों में मुहँ छिपाकर सिसक सिसक कर रो रही थी ।

(६)

जगराम को अपने पति के साथ जमना पहले भी कभी देख चुकी थी। परन्तु उस दिन अजीत के साथ उसको अपने घर के भीतर से देख कर उसे यह नहीं जान पड़ा कि यह उसका देखा हुआ आदमी है। जैसे गत जन्म का कोई प्राणी उसे नई योनि में दिखाई दिया। उसका रूप, उसका पहनावा, उसका बोलचाल, सब कुछ बदल चुका था।

अजीत ने पौर के दरवाजे से भीतर झाँकते हुए कहा—लो, ये जगराम आगये।

जमना को जगराम से बात करने की उत्कण्ठा बहुत थी सही, परन्तु इस समय उससे बचने के लिए वह स्वयं अत्यन्त अधीर हो उठी। उसे भय हुआ कि यह निर्दय अमीन न जानें उसके किस विश्वास को बेदखल करने आ गया है।

जगराम ने कौतुक के साथ घर देखकर कहा—भाई, हाथ तो बढ़िया माल पर फेरा! इसी समय घूँघट से आधा मुँह ढँके हुए जमना वहाँ धीरे धीरे आती दिखाई दी। जगराम चुप हो गया। किन्तु यह इसलिए नहीं कि जमना ने उसकी बात सुन ली, वरन् इसलिए कि ऐसे रूप की उसने कल्पना तक न की थी। उसके घूरने का ढंग अजीत को अत्यन्त लज्जा-जनक जान पड़ा। यह देखकर उसने सन्तोष की एक हलकी-सी साँस ली कि जमना की दृष्टि किसी ओर नहीं है।

जमना के चुपचाप बैठ जाने पर अजीत ने काम की बात तुरन्त छेड़ दी। बोला—ये कहतीं हैं, मुझे किसीकी फिकिर नहीं है,

मैंने तुमसे बिन्द्रावन की बात नहीं पूछी। अब तुम आ गये हो, तुम्हीं कहो तब इन्हें बिसवास होगा।

"क्या बेहूदगी की बात है!"—कहकर जगराम ने कोने में थूक दिया।

अजीत को चुप देख कर उसने फिर कहा—क्या घुग्घू की अजीब सूरत लेकर बैठे हो। किसी के घर कोई आता है तो पान-पत्ते से उसकी खातिर की जाती है। भलमनसाहत की बात तो यही है। अपने मुनाफे के लिए, हाँ गहरे मुनाफे के लिए, यहाँ तक घसीट तो लाये और टरका देना चाहते हो सूखे सूखे ही। अच्छा देखा जायगा!

जगराम अपने परिहास से अपने आप हँसने लगा। अजीत कठिनाई में पड़ गया! वह जानता था, पान-तमाखू का प्रबन्ध यहाँ सम्भव नहीं है। उसने सोचा, किसी तरह वृन्दावन का समाचार जमना को सुनवा कर वह इसे टाल दे तो उसकी जान बचे।

परन्तु बहुत इधर-उधर की टाल-टूल करने के बाद जगराम मुख्य विषय पर आया। जमना को ही सम्बोधन करके उसने कहा—तुम जानती ही हो, बिन्दा ने एक गन्दे कुली से दोस्ती जोड़ी थी। कुली के एक जवान लड़की थी,—समझीं?—वही सब फिसाद की जड़ हुई। दोस्ती होने के थोड़े दिन बाद ही कुली बीमार पड़ा; बीमार पड़ा या सब बहाना था, यह मैं नहीं जानता। बिन्दा उन दोनों को उनके घर पहुँचा आने के लिए अपनी गाँठ का पैसा लगाकर तैयार हो गया। बात क्या थी यह सब जानते हैं। रहने वाले वे लोग किसी देसी रियासत के थे। वहाँ की पुलिस भी यहाँ की से कम सज्जन नहीं होती। बच्चाजी वहाँ दो दिन में ही फाँस कर बन्द कर दिये गये। बन्द कर देने के साथ ही बोल दी गई लम्बी

चौड़ी सजा। लम्बी चौड़ी सजा वहाँ कानून की तामील करने को ही सुनाई जाती है, मगर वहाँ की जेलें इतनी भली हैं कि हट्टे-कट्टे आदमी को भी वहाँ एक महीने के भीतर-भीतर इस दुनिया से छुटकारा मिल जाता है। बस आगे की बात मुझे नहीं मालूम। उसके कहने में कुछ फायदा भी नहीं है।

यह प्रसङ्ग छिड़ने के पहले ही जमना का जी घबराने लगा था। पूरी बात सुने बिना ही बीच में, "जी न जानें कैसा करता है"—कहकर वह उठ गई।

भीतर जाते समय जमना का मुहँ देख कर अजीत के ऊपर चाबुक-सा पड़ा। दुःख इतने शीघ्र किसीका रक्त चूस सकता है, यह उसने पहली बार देखा।

वहाँ से निकल कर उसने जगराम से कहा—तुमने यह कैसे गँवारपन की बातचीत की, कुछ अच्छी तरह नहीं बोल सकते थे?

"यही मुझमें ऐब है"—दाँत निकाल कर जगराम ने कहा—"झूठ से मैं नफरत करता हूँ। जो भीतर वही बाहर। बनाकर बात करना जालसाजी है। और देखा तुमने इसका ढोंग? कैसी बनी हुई निकली! नाटक-थेटर में अच्छा कमा सकती है। यह मेरी आँख में धूल झोंकेगी?—अरे राम कहो। मैं औरत की रग पहचानता हूँ। अब तक न जानें किस किसके साथ क्या क्या खेल खेल चुकी होगी और दिखावा करती है ऐसा। दो दिन मुझे गाँव में रहने दो और देख लो कि मैं—

जगराम समझ रहा था, इन बातों से अजीत प्रसन्न होगा, परन्तु वह बीच में ही क्रुद्ध होकर बोल उठा—बकते क्या हो? भले घर की बहू-बेटी के लिए जबान सँभाल कर खोलो। मैं नहीं जानता था, सहराती होकर तुम ऐसे हूस हो गये होगे। मेरा यह

डंडा देखो, अब तुमने कोई ऐसी-वैसी बात मुहँ से निकाली और मैंने तुम्हारे दाँत तोड़ दिये।

जगराम सिटपिटा तो गया, परन्तु सँभल कर हँसने की चेष्टा करते हुए उसने कहा—वाह दोस्त! मैं हँस रहा था, तुम बिगड़ पड़े।

अजीत बोला—यह चालाकी किसी दूसरे के साथ करना, यहाँ ऐसे बुद्धू नहीं बसते। किराये के दाम तुम्हारे पास हैं; हटो, यहाँ से मुहँ काला करो।

गँवार आदमी के सामने से हट जाने में ही जगराम ने भलाई समझी। वह पहले नहीं जान सका था कि यह इतना भयंकर आदमी है। नहीं तो सैर-सपाटे के लोभ से भी वह यहाँ न आता।

अजीत की आँखों में आँसू आगये। क्यों वह इस आदमी को बुला लाया? उसका विश्वास भी यही था कि वृन्दावन अब इस पृथ्वी पर नहीं है। यह बात जमना के गले के भीतर उतारने में उसने अब तक कोई कसर नहीं रख छोड़ी थी। परन्तु इस समय स्वयं वही अपनी उस धारणा को समूल नष्ट कर देने के लिए अनेक सम्भव और असम्भव बातें एक साथ सोचने लगा। उसके जी में आया कि जाकर वह जमना से कह दे कि मैं अपना ही स्वार्थ साधने के लिए सिखा-पढ़ाकर इसे तुम्हारे पास लाया था। परन्तु ऐसा वह कर नहीं सका। व्यथित चित्त लेकर सीधा घर लौट गया।

(१०)

हल्ली ने माँ में कुछ विचित्र परिवर्त्तन देखा। वह एकदम गुमसुम हो गई थीं। उसने कारण पूछा तो झिड़क दिया गया। पड़ोस की कुछ स्त्रियाँ भारी मुहँ किये उसके यहाँ आई थीं। माँ ने

उनके साथ रूखा व्यवहार किया, यह भी वह देख चुका था। वे स्त्रियाँ उसकी माँ की कुछ बुराई-सी करती हुई लौटीं। वह चक्कर में था कि बात क्या है। इस सबका कारण उसे बाहर से मालूम हुआ। वहाँ यह समाचार फैलते विलम्ब न लगा था कि जमना के यहाँ शहर का एक आदमी आकर वृन्दावन के मर जाने की पक्की बात कह गया है।

हल्ली ने अपने होश में बाप को कभी देखा नहीं है। फिर भी वह अत्यन्त कातर हो उठा। उसकी इच्छा हुई कि आँगन में लोट लोटकर वह अपने दुःख से उस भूमि के कण कण को हिला दे। परन्तु इस दुःख में उसकी माँ ही जैसे उसे अपने विरुद्ध दिखाई दी! उन्होंने उसके बाप के मरने का कोई शोक नहीं किया। गुमसुम रहने से क्या होता है। ऐसे में तो खूब जोर जोर से रोया जाता है। ऐसा न करने के लिए मुहल्ले में अपनी माँ की बुराई वह अपने कानों सुन आया है। उसने माँ के पास जाकर—"बप्पा"—इतना ही कह पाया कि जमना ने डाँट कर टोक दिया—जा, हट यहाँ से। ऐसी बातों पर ध्यान क्यों देता है?—जमना को यह मालूम न था कि हल्ली ने अपने बाप के मरने की खबर सुनी है।

हल्ली को भय हुआ, माँ पागल तो नहीं हो गई। कल रात से ही कुछ ऐसी बात है। आज सबेरे जब थाली में सबका सब कलेवा वैसा ही छोड़कर वह उठ खड़ा हुआ तब भी माँ ने कुछ नहीं कहा और दोपहर को पानी का लोटा भरते समय उससे मिट्टी का घड़ा फूट गया तब भी उनके लिए जैसे कोई बात नहीं हुई। ऐसे कुसमय में माँ का पागल हो जाना भी उसे उनका एक अपराध-सा ही दिखाई दिया।

उदास मन से वह वहाँ जा पहुँचा जहाँ लड़के खेल रहे थे।

एक लड़के ने कहा—हमें छूना मत, नहीं तो नहाना पड़ेगा।

हली ने कुपित होकर उत्तर दिया—यहाँ सड़क पर खड़े हैं। देखें कौन मना करता है। सड़क किसीके बाप की नहीं है।

राधे उसका मित्र था, वह पास आ गया। मित्रता के अधिकार से उसने कहा—तुम्हारी माँ बहुत खराब हैं।

"उन्होंने किसीको क्या चोरी की है?"

"तुम्हारे बप्पा के मर जाने पर वे रोई नहीं हैं। मेरे बाप के मरने पर मेरी माँ तीन दिन रात लगातार रोई थीं। रोटी तक नहीं खाई थी। जो देखता था वही धन्य-धन्य करके बड़ाई करता था। दो दिन पहले ही आठ आने की रंगीन चूड़ियाँ पहनी थीं, रंज के मारे उन्हें तक फोड़ डाला था।"

हली को ध्यान आया, यह ठीक कह रहा है। चूड़ियों के रंगीन टुकड़े उसने भी उठाकर देखे थे। पास की स्त्रियों के मना करने पर उन्हें वहीं फेंक कर उसे भाग आना पड़ा था।

उसे चुप देखकर राधे ने फिर कहा—तुम अपनी माँ को सूतक मनाने के लिए समझा दो। उन्होंने बहुत बदनामी का काम किया है।

हली को क्रोध आ गया। "माँ की निन्दा करता है"—कह कर उसने उसके गाल पर तड़ाक से एक चाँटा जड़ दिया और वहाँ से भाग आया।

घर पहुँचने पर एक ओर चुपचाप बैठकर वह रोने लगा। जमना किसी काम से उधर जा रही थी, उसने कठोर पड़ कर पूछा—रोता क्यों है?

अब तक वह दबा दबा रो रहा था, अब जोर से रो पड़ा। उसने कुछ कहना भी चाहा, परन्तु 'बप्पा-बप्पा' शब्द को छोड़

कर और कुछ स्पष्ट न हुआ।

"मैं क्या करूँ, बैठ कर रो!"—कहती हुई जमना वहाँ से चली गई। इस वार उसका स्वर पहले-सा कठोर न था।

थोड़ी देर बाद अजीत पहुँचा, तब भी हल्ली वहीं बैठा था। वह चुप हो गया था, परन्तु रोने के चिन्ह उसके मुहँ पर से मिटे न थे।

अजीत ने प्यार से पूछा—रोता क्यों है बेटा?

वह चुपचाप जहाँ का तहाँ बैठा रहा। धीरे धीरे उसके सिर पर हाथ फेर कर अजीत बोला—तुम किस बात का रंज करते हो? लड़के हो, सुचित्त होकर खेलो और पढ़ो।

हल्ली ने कहा—दिबिया की काकी कहती थी—बुरी बात कहती थी। लड़के कहते हैं, तुम हमें छुओ मत, तुम्हारा बाप मर गया है! माँ को सूतक मनाना चाहिए।

अजीत ने कहा—दुत् रे पगले!

हल्ली बोला—बप्पा दूर परदेस में अकेले मर गये, न जानें कैसी तकलीफ उन्हें उठानी पड़ी। उनके लिए न माँ ने आँसू गिराये और न मैं रोया; उनका जीव क्या कहता होगा।

उसके रुके हुए आँसू फिर उसकी आँखों में दिखाई देने लगे।

अजीत को वृन्दावन के लिए कोई दुःख न था, परन्तु हल्ली के आँसुओं ने उसे हिला दिया। इस छोटे बालक का छोटा हृदय न जानें कितनी दूरी पार करके अपने बाप से मिल गया है,—अजीत को यह इसकी निरी मूर्खता ही नहीं जान पड़ी। उसके आँसू पोंछकर उसने पूछा—तुझसे कहा किसने है कि वे मर गये,—जमना ने?

सिर हिलाकर हल्ली ने कहा—उनसे पूछने गया तो उन्होंने बीच में ही दुतकार दिया।

"फिर झूठमूठ के लिए तू क्यों रोता है ? तेरे बप्पा मरे नहीं हैं। उस दिन तू सुना रहा था कि तेरी माँ कहती हैं—वे एक दिन यहाँ आयँगे जरूर, देर चाहे जितनी हो जाय, उनकी बात झूठ नहीं हो सकती। कहा था ? तब तू झूठी फिकिर क्यों करता है ? रो मत बेटा।"

"एक आदमी आकर खबर दे गया है,—वह झूठ क्यों कहेगा ?"

जगराम को दो चार गालियाँ सुनाकर अजीत ने हल्ली को विश्वास दिला दिया कि उसकी बात झूठ है। लड़के को प्रसन्न करने के लिए अपनी धारणा के विरुद्ध बोलकर भी उसे सन्तोष ही हुआ।

हल्ली को बाप के न मरने के समाचार से भी अधिक प्रसन्नता यह हुई कि माँ की वह बदनामी झूठी थी। उसकी माँ अच्छाई में किससे कम हैं ? जब उसका बाप मरेगा,—उसने कल्पना करके सोचा,—तब वे दिखा देंगी कि रंज करने में राधे की माँ भी उनके सामने कुछ नहीं !

"माँ से कह आऊँ"—कहकर वह झट-से भीतर दौड़ गया।

(११)

अजीत इधर कई दिन से जमना से मिल नहीं सका है। उसे जान पड़ता है कि जैसे जान बूझकर ही वह उससे दूर दूर रह रही है। फिर भी वह आता है और हल्ली से बातचीत करके उसे हँसा-खिलाकर लौट जाता है।

आज दोनों की बैठक घर के बाहर वाले नीम के पेड़ के

नीचे जमी। सन्ध्या हो गई थी, परन्तु अँधेरा अभी नहीं था। हल्ली बोला—अभी कहानी कहने का समय नहीं आया काका? तुम कहते थे, दिन में कहानी कहने से रास्ता भूल जाता है। कोई कलकत्ते का रास्ता भूल जाय तब तो आफत हो!

अजीत ने पूछा—कलकत्ते का रास्ता किसलिए?

कलकत्ते के साथ उसके मन का क्या सम्बन्ध है, इसे वह प्रकट नहीं करना चाहता। कई दिन से माँ का रूखा-रूखा चेहरा और उदास-उदास मन देखकर आज उसके मन में आया था कि कहीं से उसे कुछ रुपये मिल जायँ तो वह तुरन्त कलकत्ते चल दे। माँ को विश्वास नहीं हो रहा है कि बप्पा मरे नहीं हैं। नहीं तो इस तरह उनके दुखी होने का और कारण हो क्या सकता है? इस विषय में वे उससे बात तक नहीं करना चाहतीं। बात करें तो वह उन्हें समझावे। अब वह किसी प्रकार कलकत्ते पहुँच जाय तो फिर अपने बाप को खोजकर लाये बिना न लौटेगा। परन्तु यह भी वह जानता है, उसकी यह बात सुनकर लोग हँसेंगे। इसलिए बात उड़ाकर ऊपर की ओर देखते हुए उसने कहा—देखो काका, वह एक तरैया निकल आई है—एक तरैया राजा देखे—

अजीत ने कहा—तब तुम राजा होगे।

हल्ली बोला—माँ मुझे राजाबेटा कहती हैं, परन्तु मैं वैसा राजा नहीं बन सकता। हाँ कहानी के उस लकड़हारे की तरह किसी शहर के फाटक पर पहुँच जाऊँ और......तब सबसे पहले रेल पर सवार होकर कलकत्ते चला जाऊँगा।

यह कहकर उसने ऊपर की ओर देखते हुए फिर तुरन्त बात बदल दी। बोला—अब बहुत-सी तरैयाँ निकल आई। लड़के कहते

हैं ये राम की गउएँ हैं । रात में चरने के लिए ढील दी जाती हैं।

"गउएँ कहीं रात को चरने के लिए ढीली जाती हैं ?"

"ढीली तो नहीं जातीं !"—कहकर हल्ली कुछ सोचने लगा।

"तो फिर यह समझो,"—अजीत ने कहा—"ये गउएँ दिन में और कहीं चरने जाती होंगी, रात होने पर अपनी थन्ना पर लौट आती हैं। है न यही बात ? बीच में जो जगह खाली है, वहाँ ये अँधेरे के पूले रख दिये गये हैं । रात भर चरती रहेंगी।"

हल्ली का हृदय कवित्व के किसी अचिन्तित लोक में पहुँच कर पुलकित हो उठा। बोला—आहा कितनी अच्छी हैं ये ! मैं इनका बरेदिया बना दिया जाऊँ तो इन्हें चराता-चराता कलकत्ते तक, कलकत्ते तक क्या, सारी दुनिया घूम आऊँ।

अजीत ने विस्मय प्रकट करते हुए कहा—यह तो बड़ी अच्छी बात सोची हल्ली !

हल्ली निस्संकोच भाव से कहने लगा—काका, मेरी इच्छा तो कलकत्ता घूमने की ही है। कोई मुझे रोके नहीं तो मैं अभी चल खड़ा होऊँ। एक लकड़ी कन्धे पर रख लूँगा और उसके सिरे पर झूलती होगी कलेवे की पोटली । बस और जरूरत ही क्या है ! मैं अकेला पैदल ही चला जाऊँगा। बीच में बड़ी बड़ी नदियाँ मिलेंगी; बड़े बड़े बियावान जङ्गल पड़ेंगे; नगर-गाँव-खेड़े, पहाड़-पर्वत क्या क्या न मिलेगा ? मैं आगे बढ़ता ही जाऊँगा, रुकूँगा नहीं। मुझे डर है किसका ? एक दिन ठिकाने पर पहुँच ही जाऊँगा।

अजीत ने ताली पीट कर प्रसन्नता प्रकट की—यह तो बड़ी सपूती का काम है ! मैं भी तेरे साथ चलूँगा हल्ली ।

उसे याद आया, उसकी माँ ने एक बार इसी तरह उसके साथ चलने की इच्छा प्रकट की थी। उसकी यशोलिप्सा में सभी

उसके भागी बनना चाहते हैं ! उसने जमना से तो कह दिया था कि वहाँ स्त्रियाँ नहीं जा सकतीं, परन्तु इस काका को क्या कह कर मना करे, यह उसकी समझ में नहीं आया। कुछ सोच कर उसने कहा—मैं रास्ता भूल जाऊँगा इसीसे साथ चलने को कहते हो। नहीं मैं भूलूँगा नहीं। नकशे में सब रास्ता ठीक ठीक लिखा हुआ है।

अजीत ने उसकी बात तुरन्त मान ली। बोला—मैं इतना पढ़ा-लिखा नहीं हूँ बेटा। गँवार आदमी के साथ चलने से तुम्हें कुछ सुभीता न होगा।

हली ने संकुचित होकर कहा—तुम्हें मन्त्र-जन्त्र तो बहुत मालूम हैं। मैं तुम्हारे मन्त्र-जन्त्र सीख लूँ तो बहुत अच्छा हो। कहीं किसी समय बप्पा को साँप—

"राम राम ! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। तुम्हारी माँ सुनेंगी तो उन्हें बुरा लगेगा।"

"नहीं मैं उनके सामने न कहूँगा। उन्हें दुख होता है। उनके बारे में वे मुझसे बात तक नहीं करतीं। मैं कुछ कहता हूँ तो झिड़क देती हैं। कभी कभी मुझे बप्पा के ऊपर बड़ा गुस्सा आता है। उन्होंने माँ को छोड़ क्यों रक्खा है ? अब तो माँ भी उन पर वैसी प्रसन्न नहीं जान पड़तीं।"

"तुमने कैसे जाना ?"

"मैं इतना भी नहीं जानता ?—तुम किसी आदमी को हमारे यहाँ लिवा लाये थे ?"

"तुम्हारी माँ ने कहा है ?"

"नहीं। वह कहता था कि बप्पा मर गये। माँ को तुम धीरज न बँधाते तो वे पागल होकर मर जातीं।"

"परन्तु वे तो मुझ पर बहुत नाराज हैं।"

"नहीं नाराज नहीं हैं। वे तुम्हें बहुत चाहती हैं। तुम्हारी बहुत बड़ाई करती थीं।"

अजीत के मुहँ पर लाली दौड़ गई। उसने पूछा—क्या कहती थीं?

हल्ली कठिनाई में पड़ गया। उसे याद न था कि माँ ने कहा क्या था! फिर भी उसने उत्तर दिया—वही साँप पकड़ लेने की बात। वाह, उस दिन कैसी सफाई से उसे पकड़ लिया था!

यह तो वही पुरानी बात निकली। इस प्रशंसा से अजीत को कुछ विशेष हर्ष हुआ हो, यह दिखाई नहीं दिया। नशे की सह्य मात्रा की तरह यह बात उसके हृदय का रक्त नई तेजी से संचारित नहीं कर सकी।

हल्ली ने तुरंत फिर कहा—हाँ काका, तुम राजा होने वाले हो।

"राजा?"

"हाँ राजा। दिबिया की काकी माँ से कह रही थी—आज कल अजीत माते तुम्हारे मिन्तरी हैं, अब राजा कब बनेंगे? मैं बाहर जा रहा था, मैंने सुना; माँ कह रही हैं राजा बनें कि बादसा, तुम क्यों किसीकी बात में पड़ते हो?—कहकर, माँ तेजी से घर के भीतर चली गई थीं।"

अजीत ने दोनों हाथ ऊपर उठाकर अँगड़ाई लेते हुए कहा—मुझे तुम्हारी माँ से मोतीलाल चौधरी के बाबत कुछ बात करनी थी। न जानें वे कब तक खेत से लौटेंगी।

अजीत की ओर देखकर हल्ली ने अनुभव किया कि जो बात अभी उसने कह डाली है, उसमें न जानें ऐसा क्या है कि उसे वह कहनी न चाहिए थी। फिर भी कारण उसकी समझ में नहीं आया।

(१२)

जमना सन्नाटे में आ गई कि मोतीलाल चौधरी चार सौ से अधिक रुपये उस पर निकाल रहे हैं। उसने कहा—इतने रुपये हो कैसे गये ? मैं तो हर साल बराबर चुकाती रही हूँ।

अजीत ने पूछा—रसीद ले लेती थीं ?

"हाँ।"

"किसीसे पढ़ा लेती थीं ?"

जमना चुप रह गई। किसीसे रुपये की रसीद लेने का अर्थ है उसका अविश्वास करना। रसीद लेकर उसे औरों से पढ़वाते फिरना जमना के लिए ऐसा काम है जैसा किसीको मार चुकने पर भी बराबर उसके ऊपर खाँड़ा चलाते रहना। परन्तु इस समय वह यह सब प्रकट भी नहीं कर सकी। इसी बात को लेकर एक बार उसे जो अपमान सहना पड़ा था, उसकी लज्जा उसके मर्म में आज तक व्याप्त थी। उस दिन वह मोतीलाल के यहाँ पहले पहल अपने हाथ से रुपये देने गई थी। रुपये की रसीद ज्यों ही उसे मिली, त्यों ही पास बैठे हुए एक आदमी ने पढ़ने के लिए उसे उसके हाथ से ले लिया। कदाचित् वह व्यक्ति दिखाना चाहता था कि मैं मूर्ख नहीं हूँ, पढ़ना मुझे आता है। देखकर मोतीलाल कहने लगा—"हाँ, अच्छी तरह पढ़वा लो मातौन, हमने झूठी रसीद तो नहीं लिख दी। कलजुग है न, महाजन बेईमान होते हैं ! जरूरत पड़ने पर आसामी को भूखों मरने से बचावें तो हम बचावें, परवरिस करें तो हम करें, परन्तु नतीजा निकलता है—क्या निकलता है,—तुम चुप क्यों हो धन्नी ?" पास बैठे हुए उस

आदमी ने उत्तर दिया—"यही कि महाजन और साहूकार परले सिरे के बेईमान हैं !" लज्जित होकर पहला आदमी जमना का कागज उसके हाथ में लौटाने लगा, परन्तु मोतीलाल ने जोर देकर उससे वह अच्छी तरह पढ़वा ही दिया। वह पढ़ चुका तब उपस्थित अन्य व्यक्तियों को भी बारी बारी से उसे फिर पढ़ना पड़ा। बाहर सड़क पर कोई जा रहा था उसे बुलाकर उससे भी यह बेगार ली गई। आसामियों के अविश्वास को लेकर जब सभी अपना भिन्न भिन्न मत छिपी और खुली हँसी के साथ प्रकट कर चुके तब मोतीलाल ने फिर कहा—"अब भी मातौन को अविश्वास हो तो और भी चाहे जिससे पढ़वालें। तुम सब भी तो बेईमानी कर सकते हो। जमाना आजकल विश्वास करने का नहीं है।" उस दिन जमना को किसी तरह वहाँ से भागना कठिन हो गया था। तब से आज यह पहली ही बार रसीद पढ़वाने की बात उसके सामने आई थी।

जमना को चुप देखकर अजीत ने कहा—रसीद कभी किसीसे पढ़वाकर नहीं देखी तब उसका लेना न लेना बराबर है। औरतें ऐसी ही मूरख होती हैं। चालाक आदमी तभी तो उन्हें अपने फन्दे में फाँस कर उनका सत्यानाश कर डालते हैं। कोई मुझसे करे चालाकी ! मैं जेलखाने की हवा खिलाये बिना न मानूँ।

जमना ने खीझकर कहा—चौधरी ने कब किसे झूठी रसीद लिख दी जो तुम उनके लिए ऐसा कह रहे हो ?

अजीत कृत्रिम विस्मय के साथ कहने लगा—ना-ना, ऐसा कहने से पाप लगेगा। चौधरी बड़े रिसी-मुनी जो हैं !

जमना संकटापन्नस्थिति में है। इधर और उधर के अविश्वास के बीच में उसके विश्वास का जो टापू है, वह बहुत छोटा है। उस

पर वह खड़ी है, परन्तु ऐसा नहीं जान पड़ता कि वहाँ वह डेरा डालकर रुप भी सकेगी।

जमना का मौन अजीत के लिए असह्य हो उठा। उसे जान पड़ा कि इसने मेरा व्यंग न समझ कर मोतीलाल को सचमुच ऋषि-मुनि का अवतार मान लिया है। बोला—तो अब बैठी क्यों हो? उठो, लोहे की सन्दूक खोल कर तोड़ा निकाल लाओ। मोतीलाल झूठ तो लिख नहीं सकते, उन्हें उनका पावना देना ही चाहिए।

जमना ने कहा—क्या मेरे घर में लोहे की सन्दूक रक्खी है? जाकर तुम आप सब देख आओ जो कहीं कुछ हो।

अजीत हँस पड़ा। सरस होकर उसने कहा—देखो जमना, तुम सतजुग की रहने वाली हो, परन्तु समय तो सतजुग का नहीं है। कलजुग के लिए कलजुग की ही बनना पड़ता है।

जमना की आकृति कठोर हो गई। परन्तु इस पर ध्यान न देकर अजीत ने आगे कहा—तुम बहुत बिसवास करोगी तो दुनिया तुम्हें ठग लेगी।

"मेरे पास ऐसी ही रोकड़ तो है जो कोई ठग लेगा। कुछ होता तो चौधरी को चार-पाँच सौ दे ही न देती।"

"तब फिर चौधरी जितना निकाल रहे हैं वह तुम्हें उनका देना है? नहीं?—नहीं कैसे, तुम अभी कह रही थीं, रुपये होते तो चार पाँच सौ उन्हें दे न देती। यही तो चौधरी चाहते हैं। मैं समझ गया, तुम फँसोगी। मैं तुम्हें बचा नहीं सकता, कोई वकील-बालिस्टर भी कैसे बचा सकेगा? मैं जो कहने के लिए कहूँ, वही तुम कहो तो कुछ हो सकता है।"

"तुम जो कहोगे वह न करूँगी तो क्या करूँगी। चौधरी

मुझे लूट लेना चाहते हैं, परन्तु ऊपर भगवान हैं ।"

"ऊपर भगवान हैं तो, परन्तु चौधरी का इस समय वे कुछ कर नहीं सकेंगे? ब्रम्मभोज और दान-पुन्न चौधरी क्या सेंत ही करते हैं? उनके खाते में यह सब भगवान के ही नाम लिखा है। सबके ऊपर ब्याज-स्याज फैलाकर चौधरी कहीं डिगरी करा लें तो भगवान को भी आफत पड़ जायगी। अच्छा जाने दो, हँसी तुम्हें नहीं रुचती। असल मुद्दा की बात यह है कि चौधरी के यहाँ का आदमी आये तो उससे साफ कह दो—हमें रुपये नहीं देने, जाकर नालिस करो।"

जमना ने दृढ़ता से कहा—नहीं, मैं ऐसा नहीं कहूँगी।

"तो फिर अभी क्यों कहती थीं,—तुम जो कहोगे कहूँगी।"

"नहीं मैं यह न कहूँगी"—जमना ने फिर कहा।

"नहीं कहोगी, न कहो, देखो अपना काम। मुझे किसीकी बात में पड़ने की क्या पड़ी है।"—कहकर अजीत चुप हो गया।

"अच्छी बात है, तुम भी मुझे मँझधार में छोड़ दो। घर के आदमी ही साथ नहीं देते, तुम क्या करोगे?"

"मैं क्या करूँगा?"—अजीत बोला—"मैं तो चौधरी को नाकों चने चबा दूँ, तुम भी तो मेरी सुनो। मैं यह न कहूँगी, मैं वह न कहूँगी, इस तरह भी कहीं चलता है। मोतीलाल चाहते हैं कि तुम्हारा खेत और कुआँ हड़प जायँ। गाँव में वह ऐसी ही सिरे की जमीन है।"

"देखूँ कोई कैसे लेता है। मैं मर जाऊँगी परन्तु उसे छोड़ूँगी नहीं।"

"तुम न छोड़ोगी तो सरकारी प्यादा आकर छुड़ा जायगा। तुम अभी हमारी बात नहीं सुनती, परन्तु पीछे पछताओगी। अच्छा,

मेरी एक बात का जवाब दो। तुम्हें चौधरी के इतने रुपये देने हैं ?"

जमना ने सिर हिलाकर नाहीं कर दी।

"तो बस इतनी ही बात है, उनसे कह दो, हमें रुपये नहीं देने। नालिस कर दो।"

जमना ने कहा—मैं नया कागद लिख दूँगी।

"नया कागद लिख दोगी ! जानती हो, कागद लिख देने से क्या होता है ? इसका मतलब होगा, हली के गले में सदा के लिये फाँसी डाल देना। हली के गले की डोर रहेगी चौधरी के हाथ में। वह बेचारा मार खा खाकर दूसरे के खेतों में चर आया करेगा और अपना दूध दुहायगा मोतीलाल के घर जाकर। बछड़े के भी दूध दुह लेने की विद्या महाजन को आती है ! चाहे जितना बड़ा पिरीत हो, मैं चुटकी बजाकर भगा सकता हूँ, चाहे जैसा काला कीड़ा हो, मेरे आगे किसी पर दाँत नहीं चला सकता; परन्तु जानती हो,—महाजन के काटे का इलाज मेरे हाथ में नहीं है।"

जमना घबरा उठी। आँखों में आँसू भर कर उसने कहा—मैं क्या करूँ, तुम बताते क्यों नहीं हो ?

"मैं कह तो रहा हूँ, कोई कागद-बागद न लिखना। उन्हें करना हो करें नालिस।"

अजीत घेर-घार कर जमना को इसी बात पर सहमत करना चाहता है। छूटी हुई गाय की तरह घेरी जाकर किसी भाँति कुछ दूर तक वह साथ चली भी आती है। परन्तु जहाँ थान के दरवाजे पर वह पहुँची नहीं, वहीं बिचक कर फिर भाग खड़ी होती है। वह कह उठी—मैं ऐसी बात न करूँगी।

अजीत अपना करम ठोंक कर कहने लगा—वही बात कितने बार समझाई, परन्तु तुम्हारी समझ में नहीं आती। कागद

लिखकर तुम वृन्दावन भैया की जमीन भी न बचा सकोगी।

जमना बोली—मैं कागद-बागद लिखने में क्या समझूँ ?

"हाँ, यह समझदारी की बात है। चौधरी नालिस तो करें, फिर हम सब देख लेंगे। अदालत में मैं ऐसे ऐसे सवाल करूँगा कि अपने मरे बाप को रोयेंगे। आज कल जो मुंसिफ साब हैं वे बड़े भले आदमी हैं। किसान आदमी का बहुत ख्याल रखते हैं। इस मामले में लाट साब तक का डर उन्हें नहीं है। जब मैं तुम्हारा सब हाल सुनाऊँगा तब वे तुम्हारी पूजा न करने लगें तो कहना। उनके यहाँ पूजा, धरम-पुन्न सब कुछ होता है। क्रस्तान नहीं हैं। अँगरेज को छूकर नहाये बिना पानी नहीं छूते। मुझे बहुत मानते हैं। उस दिन अदालत में पूछने लगे—'अजीत, तुम मन्त्र-जन्त्र जानते हो ?' मैंने कहा—'हाँ हजूर, जानता हूँ।' सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। हाकिम हैं, सब तरफ की खबर न रक्खें तो काम कैसे चले। तुम बेफिकर रहो, मैं सब ठीक कर लूँगा। मोतीलाल हमसे एक कौड़ी बाँध ले तो कहना।"

जमना उठ खड़ी हुई। अजीत ने भी उठकर कहा—अच्छी बात है, मैं फिर आकर बात करूँगा।

(१३)

जमना खेत पर जाने के लिए भीतर के घर की साँकल लगा रही थी, इतने में हल्ली आकर उससे लिपट गया। बोला—कहाँ जाती हो माँ ?—परन्तु तुम और कहाँ जाओगी, खेत पर ही जाती होगी।

जमना ने स्नेह से कहा—इस समय छोड़ दे, नहीं तो देर

हो जायगी।

"ऐसी बहुत दूर तो जाना है जो देर हो जायगी। दूर मैं जाऊँगा। वहाँ से चिट्ठी लिखूँगा तो तुम पढ़ भी न सकोगी कि मैंने क्या लिखा।"

"यह कैसी मूरखपने की बात करता है! छोड़ इस समय जाने दे।"

"जाती हो तो चार पैसे मुझे दे जाओ।"

जमना ने विस्मय के साथ पूछा—चार पैसे किसलिए?

"बन्दर वाले आये हैं माँ। उनके साथ रीछ भी हैं। दो पैसे बन्दर के खेल के लिए, दो पैसे रीछ के खेल के लिए। मैं अभी बुलाये लाता हूँ, तुम भी खेल देखकर जाना। बड़ा बढ़िया खेल है! हीरा ने दो आने दिये थे, मैं एक आने में करा लूँगा।"

"खेल के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं"—कहकर जमना आगे बढ़ने को हुई।

धोती का छोर पकड़ कर माँ के साथ साथ आगे बढ़ते हुए हल्ली ने कहा—सुनो तो माँ, बहुत बढ़िया खेल है। देखकर तुम हँसी के मारे लोट-पोट हो जाओगी। एक बन्दर सिर पर लाल टोपी पहनकर हाथ में लाठी लिए हुए दुलहिन को लिवाने जाता है। दुलहिन रिसा जाती है, आना नहीं चाहती। तब बन्दर लाठी से धमका कर उसे घसीटता हुआ ले आता है। कैसा खेल है, देखो तो तुम! पैसा देकर खेल कराने से बन्दर वाले से मेरी दोस्ती हो जायगी। वह बहुत देस-परदेस घूमता रहता है।

हल्ली बराबर कहीं जाने की चर्चा छेड़ता रहता है, इस समय फिर वैसी ही बात उससे सुन कर जमना चिन्तित हो उठी। बोली—खबरदार जो उन लोगों से मिला-जुला। ये लोग अच्छे

नहीं होते। एक बार खेल देख चुका है, और देखने की जरूरत नहीं।

"हीरा भी तो देख चुका था"—

"वह बड़े आदमी का लड़का है, तू हर बात में उसकी बराबरी नहीं कर सकता।"—कहकर जमना चली गई।

मुहँ बिगाड़ कर हल्ली वहीं खड़ा रहा। हीरालाल बड़े आदमी का लड़का है, परन्तु बड़ापन उसमें क्या है, यह उसकी समझ में नहीं आता। वह जानता है कि पढ़ने-लिखने और दौड़-धूप में मैं उससे सब तरह श्रेष्ठ हूँ। उसने दो आने में खेल कराया, मैं एक आने में ही करा सकता हूँ। फिर भी माँ प्रत्येक बात में उसकी पक्ष क्यों लेती हैं? उसका जी एकदम बुझ-सा गया। पास की दूसरी गली से बन्दर वालों की गिड़गिड़ी की आवाज वहाँ तक आ रही थी। वह उसे और भी दुःखित करने लगी। उसने निश्चय किया, आज वह अच्छी तरह खाना-पीना न करेगा। कह देगा—हीरा को बुलाकर उसीको खिलाओ-पिलाओ, मैं नहीं खाऊँगा! एक बार उसने यह भी सोचा कि इन बन्दर वालों के साथ ही वह कहीं भाग जाय, तब माँ रो रोकर पछतायँगी। परन्तु माँ ने उन लोगों से हेल-मेल करने के लिए मना कर दिया था, इसलिए वह बात उसके मन में अधिक देर तक न रह सकी।

चार पाँच दिन बाद दोपहर को मदरसे से दौड़ा दौड़ा आकर हल्ली रसोई घर में घुस गया। चूल्हे के पास से व्यस्त होकर जमना ने कहा—अरे, पैर धोकर आ!

हल्ली इस समय एक बहुत अच्छा समाचार लाया था। उसे शीघ्र सुनाने के लिए वह जहाँ तक आ गया था, वहीं खड़ा हो गया, पीछे नहीं लौटा। हाँफते हाँफते बोला—मेरे रुपये मिल गये हैं।

जमना ने उत्सुक होकर पूछा—मिल गये? कहाँ मिले?

"अभी मुझे नहीं मिले, हीरा ने चुरा लिये थे।"

जमना का समस्त उत्साह शान्त होगया, यह हल्ली से भी छिपा नहीं रहा। उसने कहा—माँ, घबराओ नहीं, रुपये मिल जायँगे। पण्डितजी ने कहा है।

जमना ने बात अनसुनी करके कहा—जल्द नहाकर आ जा, देर हो गई है। नहीं,—तू ठहर; हाथ धोकर धूप में मैं तुझे अच्छी तरह नहलाये देती हूँ।

माँ का यह ढंग हल्ली समझ न सका। मैं इतनी बड़ी जासूसी करके आ रहा हूँ, परन्तु जैसे मेरी बात माँ के कान ही न पड़ी हो। बराबर बप्पा की बात सोच सोचकर यह इनका स्वभाव कैसा हो गया है! उसने फिर कहा—पण्डितजी ने आज हीरा की अच्छी मरम्मत कर दी है। उन्होंने उससे कहा है,—रुपये घर से लाकर दे, नहीं तो मदरसे से निकाल देंगे।

जमना ने कहा—नहीं, उसने रुपये नहीं चुराये। अपनी चीज तो अच्छी तरह रखता नहीं है और चोरी लगाता है दूसरे को। पण्डितजी से कह देना, उसे तंग न करें।—खड़ा क्यों है, उतार झट-से कपड़े; मैं नहला दूँ।

इतनी देर में हल्ली की समझ में आया कि हीरालाल बड़े आदमी का लड़का है, इसलिए माँ की समझ में वह चोरी नहीं कर सकता। उसको स्वयं रुपये मिल जाने की इतनी खुशी न थी, जितनी इस बात की कि हीरालाल को माँ अब अच्छी तरह समझ लेंगी। इस आनन्द में वह ठंढी जगह बैठकर दो घंटे तक मिट्टी के घड़े के बासी पानी से चुपचाप नहा सकता था। परन्तु इनकी समझ में कुछ आता ही नहीं है। पण्डितजी तक को विश्वास हो गया है और ये कहती हैं हीरा ने चोरी नहीं की। क्रुद्ध होकर

बोला—हीरा ने चोरी नहीं की तो क्या तुम्हारे रुपये मैंने चुरा लिये ?

"तू मेरे रुपये चुरायगा किसलिए ?"—हँसकर स्नेह से जमना ने कहा, परन्तु तुरन्त ही एक अद्भुत कठोरता उसके मुख पर दिखाई पड़ी—"जिस दिन मैं देखूँगी कि तू चोरी करता है, उस दिन मैं समझ लूँगी, मेरे लड़का था ही नहीं।"

हल्ली चुपचाप माँ का मुहँ ताकने लगा। माँ की यह बात उसे बहुत अच्छी मालूम हुई। क्या इसलिए कि इसे लेकर वह हीरालाल को अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देख सकता है ? अथवा क्या इसलिए कि इसमें भी उसे अपने प्रति माँ का अत्यन्त स्नेह दिखाई दिया ? ठीक नहीं कहा जा सकता कि बात क्या है। हो सकता है, घृणा और प्रेम के दोनों विरोधी भाव अनजान में उसके हृदय में हों,—पूर्व और पश्चिम में चन्द्रमा और सूर्य की तरह एक साथ।

परन्तु इस समय हल्ली के हृदय में क्रोध का भाव ही प्रबल दिखाई दिया। एक क्षण बाद ही बोल उठा—तुम चोर की कोद ले रही हो। मैं अपने रुपये लिये बिना न मानूँगा।

जमना ने कहा—तू यही समझ, तेरे रुपये खो गये। जो खो जाय उसके लिए समझना चाहिए, वह मेरा नहीं था।

मुहँ से बात निकली नहीं कि उसके मन में आया, उसका भी तो कुछ खो गया है। उसका खोया धन फिर मिल जाय तो क्या वह उसे लेना न चाहेगी ?

हल्ली बोला—मैंने सोच लिया था, जिसने मेरे रुपये चुराये हैं, वे उसके मरघट पर गये। पर अब मैं किसीकी न सुनूँगा—

मुहँ पर दिये तमाचे तीन,
डर किसका, अपनी ली छीन।

जमना अभी अभी पति की बात मन में ला चुकी थी, उसके बाद तत्काल मरघट का नाम उसके कान में पहुँचा। उसने डपट कर कहा—बुरे लड़कों की कैसी बुरी बातें सीखता है! आई मैं, देखती हूँ।

माँ का यह सच्चा क्रोध देखकर भी हल्ली पीछे नहीं हटा। इस समय हीरालाल के प्रति उसके मन में ऐसा ही विद्वेष था। उसके पण्डितजी तक ने कह दिया था कि उसके रुपये उसे दे दिये जायँ। अब हीरा नहीं देगा तो वह मार-पीट कर वसूल कर लेगा जमींदार के आदमी जोर-जुल्म करके किसान से लगान लेते हैं। यह वह बराबर देखता है। वह क्यों किसी पर दया करे? माँ का दिमाग तो न जानें कैसा हो गया है।

किसी तरह नहा धोकर हल्ली जब थाली पर बैठा, तब भी रह रह कर इसी सम्बन्ध में बात करता रहा। उसने बताया, किस तरह इस चोरी की बात फूटी है। एक दूसरे लड़के से मिलकर हीरा ने यह चोरी की थी। किसी बात पर दोनों में खटपट हो गई, तब भेद खुल गया। जो चोरी करेगा, वह एक न एक दिन जेल जायगा ही! पण्डितजी के पूछने पर उस दूसरे लड़के ने चोरी का सब हाल बताया है। उस दिन हल्ली अपनी जेब से पैंसिल या और कुछ निकालने के लिए उसका अगड़म-बगड़म सामान निकाल निकालकर नीचे एक किताब पर रख रहा था, उसीके साथ उसने रुपये भी रख दिये थे। इसी समय उसे किसी काम के लिए पण्डितजी ने बुलाया और वह उठकर वहाँ से चला गया। मौका देखकर उस लड़के ने हीरा से मिलकर वे रुपये उठा लिए। दोनों ने मिलकर हलवाई के यहाँ खूब मीठा उड़ाया, बाजार से पैंसिल बनाने का गोल चाकू और रबर-लगा होल्डर खरीदा।

और इधर-उधर खेल में पैसे लुटाये। अब सब दाम अकेले हीरा को देने पड़ेंगे, यह पण्डितजी ने कहा है। बड़े आदमी के बेटाजी को सजा भी तो बड़ी मिलनी चाहिए। बच्चू मदरसे में तो पिटे ही हैं, घर में भी जब उनकी चमड़ी उधेड़ी जायगी, तब जानेंगे, बुरे काम का नतीजा ऐसा होता है!

सब बातें सुनकर जमना को भी क्रोध आ गया। फिर भी उसने उसे प्रकट होने नहीं दिया। हल्ली को माँ की यह चुप्पी बहुत अखरी।

(१४)

रविवार की छुट्टी का दिन था। यही वह दिन है, जब निरन्तर छः दिन तक लड़कों को अपने पीछे दौड़ाकर समय थोड़ी देर के लिए उनके पास बैठ जाता है। रद्दी के बहुत बड़े ढेर में जैसे यही एक उनके काम की चीज हो।

परन्तु हल्ली को लगा आज रविवार न होता तो अच्छा था। जैसे इस रविवार ने षड्यन्त्र करके उसकी चोरी के रुपये एक दिन और अधिक रखने के लिए हीरालाल को अवसर दे दिया है। ऐसे बुरे काम में असहयोग करने के लिए ही आज के दिन मदरसा खुला रहना चाहिए था!

तथापि, बिना भूख के भी जब कोई मधु फल महक फैलाता हुआ हाथ में आ जाय, तब उसका सदुपयोग किये बिना नहीं रहा जा सकता। हल्ली ने आज का दिन बाहर खेत पर लड़कों के साथ बिताने का निश्चय किया। अपने खेत वाले आम में मौर आजाने की बात अभी उसने सुनी है, इसलिए उसे देखने के लिए

आज उसका वहाँ जाना और आवश्यक है।

उसने हँसकर जमना से कहा—माँ, तुम हमारे पण्डितजी से भी कड़ी हो। मदरसे की तो छुट्टी है, पर तुम आज भी मुझे नहलाये बिना न मानोगी। मैं नहाकर आया, तुम मेरे लिए पहले से थाली परोस रखो। नहीं तो देर हो जायगी, मुझे जल्दी जाना है।

जल्दी कहाँ जाना है?—जमना ने पूछा।

"खेलने जाना है, नहीं तो और क्या बम्बई-कलकत्ते? तुम कभी घर के बाहर नहीं होने देती, मेरी तो बड़ी इच्छा होती है। एक बार तुम मुझे दस ही रुपये दो, फिर देखो कि बप्पा की तरह मैं भी देस-परदेस घूम सकता हूँ कि नहीं।"

रात तक खाने-पीने से निश्चिन्त होकर हल्ली अपने दल के साथ खेत के उसी आम के नीचे जाकर ठहरा। वृक्ष नई नई कोंपलों से लदकर और भी सुन्दर हो उठा था। परन्तु उन सबको इस समय इस ऊपरी सौंदर्य की अपेक्षा न थी। वृक्ष ने हरे हरे पत्तों के भीतर कहाँ कहाँ मनोरम मौर, काव्य के मर्म की तरह छिपा रक्खा है, यही उनके देखने का विषय था। एक लड़का सहसा कह उठा—वह है वह!

दूसरे लड़के ने नीचे से एक ढेला उठाकर फेंकते हुए कहा—और यह देखो यहाँ!

हल्ली ने ऊपर न देखकर उस लड़के को डाँट कर कहा—क्या करते हो यह? मौर में आम फलते हैं, ढेला लगने से खराब हो जायँगे।

तब एक और लड़के ने प्रस्ताव किया कि वह पेड़ पर चढ़ जायगा और ऊपर से ही बता देगा कि मौर कहाँ कहाँ आया है। विचार के बाद यह बात स्वीकार करने योग्य नहीं निकली।

इसलिए नहीं कि ऊपर चढ़कर गिरने का डर है, वरन् इसलिए कि वृक्ष की डालें पतली हैं, कोई टूट जायगी तो नुकसान होगा। परन्तु थोड़ा और देखने पर इसके बिना ही उनका काम निकल गया। वे जो देखना चाहते थे वह नीचे से ही यथेष्ट संख्या में उन्हें दिखाई देने लगा।

हल्ली ने हाथ से ताली पीटते हुए कहा—इतना मौर आया है,—सबमें आम ही आम हो जायँ तो अःहा! बड़ा मजा हो।

"इतने आम होंगे कि गाँव भर के आदमी खाने बैठें तो भी न चुकें।"

हल्ली के लिए यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि इसके पेड़ के आम गाँव भर के आदमी खावें। पर उसने कहा—मैं गाँव भर के आदमियों को आम न खाने दूँगा। गाँव भर में हीरा भी आ जायगा।

"हीरा चोर है"—पास खड़े हुए लड़के ने कहा। साथ ही दूसरे लड़कों ने भी "चोर है, चोर है" की धूम मचा दी, जैसे सचमुच किसी चोर को चोरी करते हुए उन्होंने पकड़ लिया हो।

"और उसकी यह बात सुनी तुमने हल्ली? वह कहता है, तुम्हारी माँ पर हमारे हजारों रुपये आते हैं। दो रुपये ले ही लिए तो इसमें दूसरे किसीका क्या लिया। सब रुपये वे दे न सकेंगी, इसके लिए राम के यहाँ उनका विचार होगा।"

एक और लड़का बोल उठा—हल्ली की माँ ने रुपये नहीं लिये। बताओ गवाह कौन कौन है?

हल्ली थोड़ी देर के लिए अनमना हो गया। हीरा वह बात झूठ तो नहीं कहता है। उसने अपनी माँ से भी सुना है कि चौधरी के कुछ रुपये देने हैं। तो क्या इसीसे चोरी की बात सुन

कर भी माँ उस पर नाराज नहीं हुई ? उसने कहा—हीरा के बाप के रुपये हमें देने हैं, पर उसने चोरी क्यों की ? इसके लिए उसे राम के यहाँ नरक मिलेगा।

इस निर्णय ने सब लड़कों को एक एक साथ प्रसन्न कर दिया। वह प्रसन्नता देखकर विरोधी भी यह नहीं कह सकता कि विधाता ने नरक की सृष्टि करके कुछ बुरा किया है।

"और हीरा यह भी कहता था कि अपने रुपयों में हम हली का यह खेत, यह कुआँ और आम का यह पेड़ छीन लेंगे। उसके बाप के पास यह खेत चला गया तो फिर वह किसी दूसरे को इसका एक फल सूँघने के लिए भी न देगा।"

"वह न देगा तो उसके सब आम सड़ जायँगे। इतने फल सबके सब कोई एक आदमी खा सकता है—क्यों हल्ली ?"

हल्ली ने जैसे यह बात सुनी ही नहीं। उसका यह पेड़ हीरालाल छीन लेगा, यह सोचकर ही उसका मुहँ सूख गया। वह जानता है, उसकी माँ इस बिरवे को कितना प्यार करती हैं। कोई इसका एक पत्ता भी तोड़ता है तो उन्हें दुःख हुए बिना नहीं रहता। इसके नीचे सफाई ऐसी रखती हैं, जैसे यहाँ रसोई का चौका हो। उसे याद है, पिछली बार इन्हीं दिनों अपने हाथ से घड़े पर घड़े पानी खींचकर वे इसका थाला भर रहीं थीं। किसीने कहा—जब आम का पौधा फूलने पर हो, तब उसे पानी नहीं दिया जाता। इससे मौंर झड़ जाता है और फल नहीं आते। इसके उत्तर में जमना ने कहा था,—गरमी पड़ने लगी है और मेरा बिरवा अभी बच्चा है। वह प्यासा नहीं रह सकता, फल न आवें तो भले ही न आवें। उसे और भी याद आया, एक दिन माँ ने कहा था—हल्ली, यह बिरवा तेरा बड़ा भाई है। देख, यह

कितना सीधा है और इसीके नीचे तू कितना ऊधम मचाता है ? वृक्ष को अपना बड़ा भाई समझकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई थी। उसका जी करने लगा था, इससे चिपट जाय। कवि ने बहुत पहले किसी ऐसे ही बिरवे को देखकर कहा होगा—"घटस्तनप्रस्रवणै-र्व्यवर्धयत्।" हल्ली को यह मालूम न था, फिर भी इसमें माँ का "पुत्र-वात्सल्य" उसे हृदय से स्वीकार था। उसका बाप घर नहीं आता और उसका यह बड़ा भाई भी उसका न रहेगा, यह सोचकर उसकी आँखों में पानी आने लगा।

उतरता फागुन था। चारों ओर के खेत कट चुके थे। जहाँ तहाँ कटे हुए खेतों की लाँक जमा थी। लोग कहीं बैलों के मुहँ में जाली पहनाकर फसल की दलनी कर रहे थे और कहीं दली हुई लाँक में से भूसी उड़ा रहे थे। जगह जगह खेतों पर वृक्षों की छाया में किसानों के लड़के-बच्चे खेलों में व्यस्त थे। फिर भी हल्ली को जान पड़ा, मानों कहीं कोई नहीं है; दूर दूर तक किसीने खेतों का धन लूटकर मानों उन्हें नंगा कर दिया है!

एक लड़के ने कहा—हल्ली, तुम तो ऐसे सुस्त पड़ गये जैसे हीरा ने सचमुच तुम्हारा सब कुछ छीन लिया हो। वह यहाँ आयगा तो हम सब मार मारकर उसे भगा देंगे। चलो अब वही चोर-चोर का खेल खेलें।

हल्ली उत्साहित हो उठा। बोला—हाँ यही होने दो।

अब खेल के सम्बन्ध में विचार होने लगा। हल्ली कोतवाल बनकर कुएँ की जगत पर बैठेगा। सूखे हुए डंठल के पत्ते अलग करके एक कलम-सी उसने अपने लिए बना ली। और कुछ न हो कोतवाल के हाथ में यह चाहिए ही। वह इस तरह तनकर बैठेगा जैसे उसके सामने मेज रक्खी हो। कोतवाल बनने में

अब और कसर नहीं है, चौकीदार बनने के लिए भी दो तीन लड़के खुशी से तैयार हैं। बस कमी है एक चोर की। खेल में भी चोर का पा लेना सरल नहीं दिखाई दिया। अधिक मूर्ख समझे जाने वाले एक लड़के से अनुरोध किया गया तो उसने इनकार करके कहा—चौकीदार बुरी तरह मारेगा।

हल्ली ने कहा—जो चोरी करेगा वह पिटेगा नहीं तो क्या होगा?—पर एक बात है, चोरी के लिए धन चाहिए।

दूसरे लड़के ने कहा—चोर आम के पत्ते चुरायगा, चौकीदार पीछे छिपे रहेंगे, वे आकर कहेंगे—हजूर—

हल्ली बीच में ही बोल उठा—नहीं, आम के पत्ते हरगिज नहीं तोड़े जा सकते। आम मौर रहा है।

न चोर, न चोरी का धन,—ऐसे में कोतवाल और चौकीदार का काम कैसे चले? इसी समय एक लड़का बोल उठा—वह देखो, हीरा आ रहा है।

क्षण भर में हीरालाल निकट आ गया। हल्ली कोतवाल बना बैठा था, इस समय उसे चोर की ही आवश्यकता थी। इसीसे वह उसे अपने खेत पर आने से रोक नहीं सका।

हीरालाल ने झट आगे आकर कहा—क्या चोर-चोर खेल रहे हो? खेलो,—मैं बनता हूँ चोर।

सब एक साथ विस्मित हो उठे। हल्ली से इसकी इतनी लड़ाई है, फिर भी इसे यहाँ आकर खेलने में लज्जा नहीं! सच तो यह है, इस समय उसके इस व्यवहार से हल्ली को भी प्रसन्नता हुई। दुर्गुण में भी मिरच के स्वाद जैसा कुछ है, जो हमारी रसनावृत्ति को मुग्ध किये बिना नहीं रहता।

एक लड़के ने कहा—यह बिज्जू कह रहा था, मैं चोर नहीं

बनता, चौकीदार बुरी तरह पीटेंगे।

हीरालाल बोला—यह तो पूरा बिज्जू ही है, चोरी करना क्या जाने। चौकीदार हों, कुतवाल साहब हों, वकील साहब हों, सबकी आँखों में धूल डालकर न भाग गये तो फिर बहादुरी ही क्या।

हल्ली ने उत्तर दिया—चोरी करने में क्या बहादुरी है? तुमने चोरी की, फिर एक दिन पकड़ ही तो लिए गये। अब कल आकर रुपये न दोगे तो पण्डितजी—

"अरे देख लिया पण्डितजी को!—तुम बहुत सीधे हो इसीसे तुम्हें सबक देने के लिए मैंने वह काम किया था। नहीं तो मुझे कमी क्या है? मेरे घर ढेरों रुपये आते हैं! तुम दो रुपट्टी के लिए इस तरह जान देने लगोगे, यह मैं नहीं जानता था। मेरे घर इतने रुपये नाली में बह जाते हैं। जब कहो तभी तुम्हें दस-बीस-पचास रुपये लाकर दे दूँ। तुम्हारी माँ के ऊपर भी हमारे पंसेरियों रुपये निकलते हैं। मेरे यहाँ कमी किस बात की है।"

हल्ली को लज्जा मालूम हुई। सचमुच यह तो बहुत ओछे-पन की बात है कि मैं दो रुपये के लिए इतना अधीर हो उठा हूँ। माँ ने इसीसे इन रुपयों के लिए बुरा नहीं माना। सबसे अधिक लज्जा की बात तो यह है कि उसकी माँ पर इसका इतना करजा हो। उसने वह प्रसङ्ग बदल कर कहा—तुम हमें सबक क्या दोगे, दरजे में सबसे पिटते रहते हो।

खिलाड़ियों को भी बातचीत रुच नहीं रही थी। चोर आ जाय और काम रुका रहे? झट-से खेल शुरू हो गया।

खेल खेलना था झूठ-मूठ की चोरी का, परन्तु हीरालाल करने लगा सचमुच की चोरी। एक ओर आम के पत्ते बहुत ऊँचाई पर न थे। एक हाथ में लकड़ी लिये हुए चोर उचक उचक

कर पत्तों का एक गुच्छा नीचे गिराने लगा। जब तक हल्ली ऐसा करने के लिये दूर से उसे रोके रोके, तब तक वृक्ष की एक टहनी उसके हाथ में टूट कर आ गई।

हल्ली गरम होकर चिल्ला उठा—पकड़ो पकड़ो, चोर बेईमान को। डाका डालकर भाग रहा है!

हल्ली एकाएक भूल गया कि उसका पद कोतवाल का है, उसका काम साधारण चौकीदार की तरह चोर के पीछे भागते फिरने का नहीं। वह दौड़ा, चौकीदार दौड़े और साधारण नागरिक की हैसियत के दूसरे लड़कों ने भी पुलिस के इस काम में सहायता देने से जी नहीं चुराया। चोर और पुलिस में प्रबल कौन है, यह बताना आसान नहीं। परन्तु कहना पड़ेगा, इस समय इन निकट सम्बन्धियों में चोर ही प्रबल था। वह तेजी से भागता हुआ चोरी के माल के साथ बहुत आगे दिखाई दिया।

यदि सचमुच के कोतवाल की बात इस समय हल्ली के मन से उतर न गई होती तो बहुत सम्भव है, इस बनावटी पुलिस के हाथ भी यह चोर न आ सकता। परन्तु हल्ली खेल-बेल भूलकर हीरालाल के पीछे इस तरह दौड़ पड़ा था कि थोड़ी दूर पर ही उसने चोर का एक हाथ पकड़कर उसकी पीठ पर एक धमाका जड़ दिया।

हीरालाल ने चोरी के माल वाला हाथ ऊपर उठाकर हल्ली को उस ओर ढकेला जहाँ एक कटीला झाड़ पड़ा था। इधर इसने काँटों से बचने का प्रयत्न किया, उधर उसे गाली देता हुआ वह आगे बढ़ गया।

हल्ली ने पास पड़ा हुआ एक पत्थर उठाकर कहा—भाग मत, नहीं तो मैं मार डालूँगा।

उत्तर में दूसरी ओर से फिर दूसरी गाली उसके कान में पहुँची कि उसने हाथ का पत्थर उसकी ओर चला ही तो दिया।

इधर उधर के लड़कों ने देखा कि हीरालाल नीचे जमीन पर है। सब चिल्ला उठे—हल्ली, यह क्या किया?

हल्ली नहीं चाहता था कि वह ऐसा कुछ भयंकर कर बैठे। पर अब क्या हो सकता था। वह हीरालाल की ओर देखे बिना ही दूसरी ओर भागा। दूसरे लड़के भी भागते दिखाई दिये। थोड़ी देर बाद ही वहाँ फिर पहले का सन्नाटा छा गया।

(१५)

खा-पीकर हल्ली के चले जाने के बाद जमना सुस्त पड़ गई। निरन्तर दूसरे काम करती हुई भी, जागृति में सुषुप्ति की तरह, एक गूढ़ वेदना वह अपने में प्रच्छन्न रूप से धारण किये रहती थी। कब किस अज्ञात के स्पर्श मात्र से वह जाग उठेगी, इसका ठिकाना न था। बीच बीच में वह स्वयं जाँच लेना चाहती थी कि उसकी वह वेदना शान्त तो नहीं हो गई। एक ऐसी अवस्था होती है जब वैद्य जान बूझ कर रोगी के शरीर में ज्वर बने रहने की व्यवस्था करता है। जमना की वह वेदना उसकी इसी प्रकार की जीवननिधि थी। इसीका सूक्ष्म विद्युत् प्रवाह दूरगत स्वामी के साथ उसका सम्बन्ध अविच्छिन्न किये रहता था। सहसा सुस्त पड़कर उसने अपने को सन्तोष देना चाहा कि उसका शरीर ठीक नहीं है। चुपचाप अँधेरी कोठरी में जाकर वह लेट रही।

सन्ध्या समय बाहर गाय के रँभाने की आहट से चौंककर वह उठी। वही इस घर में जेठी-बड़ी है,—क्या इस तरह आलस

में दिन बिताना उसे उचित है। मुहल्ले की स्त्रियाँ देख गई होंगी कि मैं दिन में सो रही हूँ; कहती होंगी, बिना काम के रानी-महारानियों की तरह लेट कर आराम करती है! अच्छा हुआ; हल्ली ने आकर नहीं देखा।—वह तत्काल इस तरह काम में लग गई जैसे उसके इतनी देर तक पड़े रहने से कोई बहुत बड़ी गड़बड़ी आ गई हो।

घण्टे डेढ़ घण्टे बाद एक हाथ में ऊपर तक फेन से भरा दूध का बरतन और दूसरे में दिआ लेकर आगे आगे प्रकाश करती हुई वह रसोई घर की ओर जा रही थी। बीच में पौर के चबूतरे पर हल्ली का बस्ता देखकर उसे ध्यान आया, वह अभी तक नहीं लौटा, देर बहुत हो गई। सोचने के साथ ही उसका हृदय एकदम धक् करके रह गया। आज खेलने के लिए जाने के पहले हल्ली कह रहा था, मेरी इच्छा देस-परदेस घूमने की बहुत है। वह सोचने लगी, मैंने उसी समय उसे डाँट क्यों न दिया। ऐसी ही बातें सोचते सोचते बड़ा होकर क्या वह घर रह सकेगा? वह भी मुझे छोड़ देगा तो मैं बचूँगी कैसे? इस तरह का भय जमना के लिए नया न था। घर में कहीं ऐसी-वैसी जगह चूहे का बिल देखकर उसमें साँप होने की आशंका के जैसा वह सह्य हो चुका था। परन्तु इसके भी कुछ देर बाद जब हल्ली उसे दिखाई न दिया तब सचमुच चिन्तित होकर वह पता लेने के लिए निकली।

गली की मोड़ पर ही राधे दिखाई दिया। उसे पुकार कर जमना ने पूछा—हल्ली कहाँ है भैया?

"मुझे मालूम नहीं है काकी। बिज्जू से पूछ लो मैं कुछ नहीं जानता।"—दूर से कहकर वह तुरन्त भाग गया।

जमना की बोली सुनकर पास के घर से विजयराम की दादी निकल आई। बोली—अरी जमू, अपनी सपूत की करनी सुनी? मैं कितना कहती रही, बहुत लाड़-प्यार करना अच्छा नहीं, लड़का बिगड़ जाता है। अब वही बात हुई कि नहीं? लड़के और भी बहुत देखे, पर ऐसा बज्री दूसरा नहीं देखा। दिन भर नटखट बना घूमा करता है। मेरी बात सुनी होती तो—

"मौसी, हुआ क्या है?"

"हुआ क्या है! दुनिया भर जो बात जानती है उसे भोली बनकर तुम छिपा लोगी? मैंने पहले ही कह रक्खा था। कह रक्खा था कि नहीं, मुहल्ला भर जानता है। तुम्हारे "ना" करने से क्या होगा?"

थोड़ी दूर पर विजय को देखकर जमना ने आवाज दी—बिजैराम, सुन तो भैया—

मौसी बीच में ही बोल उठीं—मेरी बात तो सुनती नहीं—

"मौसी, तुम कुछ कहो तो।"

अपने मुहँ से समाचार सुनाने का प्रसङ्ग मौसी के हाथ से निकलने वाला ही था, पर उन्होंने निकलने नहीं दिया। बोलीं—कहती है कुछ कहो तो! कहना और कैसा होता है। मैंने कहा नहीं कि हल्ली ने हीरा को पत्थर मार मार कर घायल कर दिया है।

विजय ने वहीं से प्रतिवाद करके कहा—हल्ली के खिलाफ झूठी बात क्यों जड़ रही हो बऊ? हीरा को तो अभी अभी खेलता छोड़ आया हूँ। हल्ली ने उसके ऊपर पत्थर फेका भर था, चोट उसे नहीं आई है।

जमना ने सन्तोष की साँस ली। बोली—हल्ली कहाँ है? देख, मैं उसकी खबर लेती हूँ कि नहीं।

"मुझे मालूम नहीं है। बड़ी देर से नहीं देखा। हीरा चोरी करके भाग रहा था"—

फिर वही चोरी की चर्चा! जमना झट आगे बढ़ गई। उसने सोचा—डर के मारे हल्ली कहीं छिप गया है, आज अच्छी तरह उसके कान मले बिना न रहूँगी।

जमना ने यह सोचा तो, परन्तु अपने किसी अड्डे पर जब वह नहीं मिला तब मन ही मन कहने लगी—अरे लौट आ भैया, लौट आ, मैं मारूँगी नहीं। मेरे बेटा, तू भी क्या मुझे छोड़ जायगा?

उसने, अजीत ने और दूसरे पड़ोसियों ने लालटेनें ले लेकर बहुत खोज की, परन्तु कहीं हल्ली का पता न लगा।

सारी रात जमना की जिस तरह कटी, यह उसका अन्तर्यामी ही जानता है।

(१३)

बड़े सबेरे से हल्ली के सङ्गी-सहपाठी फिर उसकी खोज में लग गये। खेलते समय गाँव के जिन खँड़हरों में वह छिपा करता था, वे सब उन्होंने देख डाले; गाँव के बाहर छिपने योग्य जितने झुरमुट थे, उन सबकी तलाशी ले ली; एक जगह उजाड़ में पुरानी बावड़ी थी, कथित भूत का भय छोड़कर उसका कोना कोना देख लिया; जहाँ देखना निरर्थक था उसे भी नहीं छोड़ा; फिर भी कहीं किसीको हल्ली की छाया तक न दिखाई दी। एक लड़के ने बताया कि एक बार हल्ली छिपने के लिए एक वृक्ष पर चढ़ गया था। जब किसीने उसे खोज न पाया तब अपने आप नीचे उतर

कर उसने कहा था—मैंने ऐसी जगह चुनी थी, जहाँ चार दिन तक छिपा रहता, फिर भी नीचे रहने वाले को हवा तक न लगती कि ऊपर कोई है। "वहीं होगा" कह कर कई लड़के एक साथ वहाँ दौड़ गये।

हीरालाल भी उनके साथ था। उसने पेड़ के नीचे खड़े होकर आवाज दी—हल्ली, नीचे उतर आओ, मुझे चोट नहीं लगी।

कुछ उत्तर न पाकर दो लड़के चट-से ऊपर चढ़ गये, किन्तु वहाँ भी उनकी आशा पूरी न हुई।

अजीत निकटवर्ती रेलवे स्टेशन देखने गया था। उसका विश्वास था कि हल्ली कहीं भाग गया है। वह उससे अपने बाहर जाने की बात कभी न कभी किया ही करता था, उसने उसकी इस तरह की बातों में आमोद-पूर्वक भाग भी लिया है, कभी समझाया नहीं कि ऐसा करना ठीक नहीं है। इसलिए उसके भाग जाने का कुछ उत्तरदायित्व उसे अपने ऊपर भी दिखाई देता था। इधर उधर आस-पास के गाँवों में खोज के लिए जितने लोग गये थे वे सब तो सन्ध्या समय तक लौट आये परन्तु वह नहीं लौटा।

एक लौटने वाले ने आकर जमना से कहा—अजीत दादा रास्ते में मिले थे। टेसन पर तो कुछ पता चला नहीं, रास्ते में एक बरेदिया से सुराग मिला है। उसने बीरपुरा की ओर जाता हुआ एक लड़का देखा था। दादा को बिसवास है कि वह हल्ली होगा। वे आगे चले गये हैं। मैं भी साथ जाना चाहता था, पर मेरे काम का हरज सोचकर मुझे लौटा दिया है। कहा, मैं जाकर तुम्हें खबर दूँ कि फिकिर न करें। आहा! कितना परसरम कर रहे हैं! सबेरे से मुहँ में दाने का परबेस तक नहीं हुआ। मैंने

कहा, गाँव में मोदी की दूकान पर चलकर पानी तो पी लो दादा, नहीं तो तबीयत बिगड़ जायगी। बोले तू मेरी फिकिर न कर, एक दो दिन न खाने से मेरी तबीयत नहीं बिगड़ती। जब तक गाँव में चलकर मोदी की दूकान देखूँगा तब तक दो कोस चल सकता हूँ। उनकी बात सुनकर मेरे तो आँसू आ गये। भौजी, मेरा मन अच्छी तरह बोलता है, अजीत दादा हल्ली को लेकर ही लौटेंगे। हल्ली भी कैसे अच्छे सुभाव का लड़का है, सदा सबसे हँस कर ही बात करता है। जो सुनता है, वही हाय-हाय करने लगता है।

जमना की आँखों में भादों की जो झड़ी थोड़ी देर के लिए रुक गई थी, वह फिर बरसने लगी।

इसी थोड़े समय के बीच में न जानें कितनी बार हल्ली के लौट आने का आश्वासन उसे मिल चुका है। हृदय में किसीके कुछ हो, बात सबके मुहँ से एक ही तरह की निकली है। धुन्ना चमार से लेकर जन्मकुण्डली देख जाने वाले गयादीन पाँड़े तक के मत में तत्वतः कोई विरोध नहीं पड़ा। कहा सबने यही है कि हल्ली शीघ्र से शीघ्र लौटेगा। परन्तु वह शीघ्र से शीघ्र होगा कब, यह कौन जानें। जमना के लिए तो समय निष्प्राण-सा हो गया है, जैसे उसमें कोई गति नहीं रही। उसके लिए दिन के बीच में ही दुर्भाग्य की यह ऐसी रात आ पड़ी है, जिसमें न तो प्रकाश है, न विश्राम और न तंद्रा ही। कुछ है तो बस अशान्ति, केवल अशान्ति। बीच बीच में आश्वासन के जितने प्रकाशपिण्ड उसे बताये जाते हैं, वे अपने स्थान पर भले ही बहुत बड़े हों, किन्तु इस समय तो उसे सबके सब किसी अलंघ्य दूरी पर दिखाई दे रहे हैं। किसी घोर अविश्वास ने आकर उसके हृदय को एका-

एक आच्छन्न कर लिया है। क्या वह देख नहीं चुकी है कि उसका बुद्धिमान् पति जाकर नहीं लौटा? न जानें कहाँ, किस जगह संसार ने उसे भुलाकर रख छोड़ा है। अब तक वह नहीं लौटा, किसी तरह एक दिन के लिए नहीं लौटा। ऐसी अवस्था में कैसे विश्वास हो कि उसका अबोध लड़का संसार के इस निर्मम जाल में भूलेगा नहीं, शीघ्र लौट आयगा? वह अनुमान नहीं कर पाती कि वह कितनी बड़ी अभागिनी है। उसका अभाग्य केवल उसीके लिए होता तब कदाचित् वह उसे इतना कठिन न समझती। वह तो उसके अबोध पुत्र को न जानें किस भीषण विपत्ति के मुख में खींचकर ठेल ले गया है। उस अज्ञात संकट का पेट भरने के लिए कहाँ जाकर वह अपना क्या कर डाले यह उसकी समझ में नहीं आता।

(१७)

हल्ली के लिए लगातार कई दिन तक दौड़-धूप करके उस दिन सबेरे अजीत लौट आया। लौटने के बहुत पहले उसका जी बैठ चुका था। तो भी दूर के दो एक ऐसे गाँव देखे बिना उससे न रहा गया, जहाँ जमना के कोई दूर के सम्बन्धी रहते थे। वह भी समझता था कि इससे कुछ लाभ नहीं है। यह तो मानों नाड़ी-छूट आशा को उस समय तक औषध देते जाना है जब तक कि वह दी जा सके। अन्ततः वह लौटा। कई दिन हो गये थे, इसलिए घर के काम की चिन्ता तो थी ही, साथ में जमना का समाचार लेना भी उसे आवश्यक जान पड़ने लगा। चलते चलते एकाएक उसके खिन्न हृदय में आया कि मैं इधर मारा-मारा फिरता हूँ, उधर कहीं हल्ली लौटकर न आ गया हो। जरूर आ गया

होगा, जल्द लौटाना चाहिए !

जाने के पहले वह प्रबन्ध कर गया था कि एक पड़ोसिन, रूपा जमना के घर रहे। वही पहले पहल उसे मिली। बोली—आ गये लाला !

"आ गया !"—कहकर अजीत धम-से पौर के चबूतरे पर बैठ गया।

थोड़ी देर के सन्नाटे के बाद रूपा फिर बोली—कोई पता नहीं चला ?

"पता चलता तो इस तरह अकेला आ जाता ? वहीं से पीटता-पीटता उसे जितना लम्बा, उतना ही चौड़ा करके न लाता तो मेरा नाम। ऐसे लड़के होते ही किसलिए हैं जो माँ-बाप को इतना दुःख दें। मेरी तो जान आफत में आ गई !—दीना आया था ?"

"आये थे। तुम्हारे परसरम की बात उन्होंने जमना बेंन से कही तो वे रोने लगीं। कौन है जो दूसरे के दुख में इतना साथ दे। तब से भूख-प्यास भूलकर घूम रहे हो। उस दिन तो दीने लाला की बात सुनकर मुझे ऐसा लगने लगा कि अब तुम आते ही हो और आकर हँसते हुए इही को महतारी के सामने कर दोगे। इतनी तकलीफ की तकलीफ उठाई और हुआ कुछ नहीं। देखो तो मुहँ कैसा सूख गया है ! आदमी इस तरह दिन रात एक करके काम में लग जाय तो चोला कितने दिन चले ?"—कहकर उसने एक जगह भीत से टिके हुए बाँस के बीजने को उठाकर अजीत के हाथ में दे दिया।

पङ्खा हिलाते-हिलाते अजीत कहने लगा—दो चार दिन खाने को न मिलने से चोला नहीं बिगड़ता। दस दिन की लंघन में

बीस कोस की मंजिल कर सकता हूँ। इस बार तो भुने चने साथ लेना नहीं भूला। खाने-पीने की तकलीफ मुझे नहीं होती। तकलीफ होती है यह देखकर कि ऐसा घर सूना-सूना हो गया। कैसा अच्छा लड़का था, न जानें कैसी कुमत उसे आ गई। जहाँ मिल जाता वहीं हाथ पकड़ कर कहने लगता—घर चलो काका, आज अच्छी-सी कहानी कहना। बातें ऐसी समझदारी की कहता कि कोई लिखा-पढ़ा भी क्या करेगा। जी करता था, छोटे बच्चे की तरह गोद में लेकर चूम लें। मैं कहता हूँ, दोष हल्ली का नहीं है, जमना ने ही उसे घर नहीं रहने दिया। कहाँ का बेईमान बाप, जिसका पता न ठिकाना, न जानें कब का नये जनम में पहुँच चुका होगा; उसीकी बातें सुना सुनाकर लड़के का जी खराब कर दिया। जैसा किया वैसा भोगें अब उसका फल।—हैं कहाँ?

"जमना जीजी? गऊ वाले घर में उसार कर रही हैं।"

"हूँ—गऊ की सेवा कर रही हैं, इससे लड़का जल्द लौट आयगा! जानती नहीं, आजकल देवता भी पत्थर के हो गये हैं। कितनी ही खुशामद करो पसीजने का नाम नहीं लेते। इतने दिन तक माला लिए घर बैठी तो रहीं, किन्तु निकला कुछ फायदा? औरतों की समझ ऐसी ही ओछी होती है। कितना क्या नहीं हुआ, पर अपनी बान न छोड़ेंगी। मुझे करना क्या है, जितना काम मेरा था, मैंने कर दिया। मिट्टी का लड़का बना कर तो मैं ला नहीं सकता।"

"गऊ का तो दो तीन दिन से पता नहीं है। किसीका ध्यान ही न था कि वह लौटी या नहीं। बछड़ा उसके लिए हौंड़ रहा है।"

"तुमने यह एक और नई बात सुनाई ! अभी लड़के के लिए मारा मारा फिरता था, अब गऊ की खोज करो। फालतू जान गाँव में किसीकी है तो अजीत माते की। घर का काम छोड़ो और मूरख बन कर इधर-उधर मारे फिरो। एक दिन टें बोल जाऊँगा तभी यह इल्लत छूटेगी !"

रूपा ने आँखें तरेर कर कहा—कैसी बातें करते हो ! तुम दूसरे के लिये इतना करते हो, इसके लिए जहाँ सुनो वहीं तुम्हारी बड़ाई हो रही है।

अजीत ने कहा—रूपा, आजकल के जमाने में किसीकी बड़ाई करने वाला कोई नहीं है। लोग-बाग तो यही समझते हैं कि मेरी मन्सा कुछ बुरी है। कहें जिसे जो कहना हो, मैं तो अपना काम करता हूँ। आज ही लौटा था, अब आज ही गऊ की खोज के लिए फिर जाना है। देखते समझते गऊ की गर्दन पर छुरी तो फिरवा नहीं सकता। गऊ कहाँ होगी, मैं जानता हूँ। यह सब उसी चौधरी वाले की बदमासी है। वही पास के रियासती कांजीहौस में किसीसे कहकर ढोर बन्द करवा देता है, वहाँ के मुंसी से मिलकर सस्ती बोली में कौड़ी-मोल खरीद लेने के लिये। कई बारदातें ऐसी करा चुका है। ऐसे आदमी का मुँह देखने का धरम नहीं।

सुनकर रूपा सन्नाटे में आ गई। थोड़ी देर बाद उसने कहा—तब गऊ को ही छुड़ाकर ले आओ। जमनाबेन को सुख तो मिले।

"गऊ के मिल जाने से ?" अजीत ने कहा—"तुम भी खूब हो ! गऊ के मिल जाने से हल्लो की कमी पूरी हो जाय तो मैं एक की जगह चार लाकर बाँध दूँ। इसीको कहते हैं स्त्री की

समझ। जैसी तुम्हारी उन बेन की समझ है वैसी ही तुम्हारी। कोई किसीसे घट होकर नहीं रहना चाहती।"

"जब देखो तब हँसी उड़ाना जानते हो और कुछ नहीं। यहाँ जमना जीजी का हाल देखकर तुम रोने न लगते तो मैं समझती कि है कुछ तुममें पोरख। इधर-उधर घूम फिर कर ही पुरुप-मानुस समझने लगते हैं कि जग जीत लिया, अब और कुछ नहीं बचा। यहाँ मुझे चिपका कर तुम तो चलते बने, जैसी कुछ मुझ पर बीती मैं ही जानती हूँ। देखकर न तो रहते बनता है, न भागते।"

अजीत ने चिन्तित होकर पूछा—मरने वरने की तो कुछ नहीं सोच रही हैं?

"पराये मन की कोई क्या जाने। डर मुझे भी लगता है कि रात-बिरात कुछ कर न बैठें। पहली रात की बात सोचकर छाती अब भी धक्-धक् करने लगती है। चारों ओर अँधाकुक्क, ऊमस इतनी कि हाथ से बीजना न छूटता था। आधी के पार जैसे तैसे झपकी लगी थी कि किसी खटके-से आँख खुल गई। देखा, वे अपनी खटिया के पास खड़ी खड़ी कुछ दूर की-सी सुन रही हैं। मैंने डाँट कर पूछा—'यह क्या करती हो?' बोलीं—रूपा तुमने सुना नहीं? जैसे हल्ली पुकार कर रहा हो—'माँ, माँ कहाँ हो, आओ।' मेरा भीतर वाला घबरा उठा कि इन पर कोई छाया-वाया तो नहीं आ गई। मैंने धमकाया—'कैसी भूली-भूली बात करती हो, लेट रहो। हल्ली इस तरह अँधेरे में थोड़े आयगा; वह तो दिन में उसी तरह हँसता-खेलता आयगा, जिस तरह रोज मदरसे से आता था।' पकड़ कर उन्हें लिटा देना चाहा कि फिर बोल उठीं—'वह सुनो!' और मुझे ढकेल कर

दरवाजे की ओर दौड़ गई। आवाज कहीं कुछ न थी, वही रात की साँय-साँय, भाँय-भाँय का सन्नाटा था। मैं घबरा गई। मेरा बूता कहाँ कि उन्हें पकड़ रखती; और पास में मदद के लिए भी कोई न था। मुझे लगा, कहीं कुएँ में जाकर धम-से कूद न पड़ें। सारी रात राम राम करके ही किसी तरह कटी।"

कुछ तन कर नये बल के साथ अजीत एकाएक बोल उठा—रूपा, तुम समझती हो मैं हिम्मत हार बैठा हूँ, पर तुम गाँठ बाँध लो,—मेरी बात इधर से उधर नहीं होती,—हली को खोजे विना मैं चैन न लूँगा, न लूँगा। मेरा ब्रह्म बोल रहा है वह दूर नहीं गया। यहीं कहीं छिपा है जमना के डर से। इन्हें तुम कम न समझो। अब इधर-उधर सिर पटकती हैं, किन्तु बेचारा जब सामने था तब सदा ताड़ना ही करती रहीं। एक दिन की बात सुनो, हली बन्दर का खेल देखने के लिए पैसे माँगने गया तो चट-से गाल पर बेचारे के दो चाँटे जड़ दिये। ढंग देखो तुम! लड़का है, पैसे लेकर वह खेल न देखेगा तो क्या बूढ़े लोग देखेंगे? जब मैंने सुना और मैं उसे निकाल कर पैसे देने चला तो बोला—दूसरे के पैसे नहीं लिये जाते काका। समझदारी देखो उसकी! मैंने एक चपत लगाकर कहा—धुत् पगले! मैं कोई पराया हूँ क्या? अबकी उसे मिलने दो तो मैं उसे अपने घर ले जाकर रक्खूँगा। कह दूँगा तुम इसकी कोई नहीं होती; जाओ जो दीखे सो करो।

रूपा ने इशारा करके कहा—वे पिछवाड़े के घर में हैं।

"हाँ,—मैं यह बात हजार आदमियों के सामने कह दूँगा। माता का धरम यह नहीं है कि बच्चे को मारें-पीटें। जो जानवर को बुरी तरह मारे उसे सजा भी होती है। सरकार बहादुर का

कानून है । कोई खिलाफ नहीं चल सकता ।"

"क्यों बेचारी दुखिया को झूँठ-मूँठ दोष देते हो ? कौन महतारी ऐसी होगी जो अपने तन के अङ्ग से बुरा बरतावा करे। वे अपने दुःख में आप ही घुल रही हैं, ऊपर से तुम उन्हें बोल सुनाते हो। महतारी लड़के को प्यार न करे तो मारे कैसे ? मैं तो देखकर ही अपना धन्न भाग मानती हूँ । मेरा लड़का-बाला होता तो मैं इतना रंज न कर पाती। भगवान भी सब जानते हैं, इसलिए ऐसी-वैसी को कुछ नहीं देते। मुझे नहीं देते तो कुछ न दो हे मेरे जगन्नाथ स्वामी, बस जमनाबेन की गोद सूनी न करो। मेरी यही विनती है ।"

कहकर रूपा ने दोनों हाथ अपने माथे से लगा लिये। उसकी आँखों में आँसू छलक उठे थे। अभिभूत होकर अजीत चुपचाप बैठा रहा।

रूपा फिर कहने लगी—वे कैसी होगई हैं, यह देखकर रुलाई आती है। गऊ न खोती तो पागल हो जातीं। एक तरह से अच्छा ही हुआ यह। एक दुःख के बाद दूसरी चिन्ता आ जाय तो दोनों हिलमिल कर अपना जी हलका कर लेते हैं। बछड़े का हींड़ना सुनकर ही जैसे उन्हें सुर्त हुई। बोलीं—इसी तरह मुझसे बिछुड़कर हली भी कहीं बिलख रहा होगा। उठीं और वहाँ जाकर उससे लिपटकर फिर रो पड़ीं। उस दिन के बाद परसों ही पहली वार अपने हाथ से चूल्हा सुलगाया, कनक माँड़कर रोटी सेंकी, फिर अपने हाथ से ही कौर कौर करके भर पेट उसे खिलाई। खिलाते समय बीच बीच में आँसू भी आ जाते थे ! मैंने सोचा—रो लेने दो, इससे जी हलका होता है। उन्होंने बछड़े को ऐसा प्यार किया, ऐसा कि, जैसे उसे अपने आँचल का दूध पिला देना

चाहती हो ? मैं तो देखकर वैसी ही रह गई।

धीरे धीरे आकर जमना भीत के सहारे खड़ी हो गई। अजीत ने देखा उसके मुख में श्यामता आगई है। नेत्र निरीह-से, निश्चल; उनमें किसी प्रकार का स्फुरण नहीं है। भीतर के भाव जैसे भीतर ही मूर्च्छित हों, बाहर आकर अपनी सजीवता नहीं प्रकट कर पाते।

अजीत ने उसके दुःख का जो झंझा रूप कल्पित कर रक्खा था, उसे वैसा न पाकर उसका जी कुछ हलका हुआ। फिर भी उसे ऐसा नहीं दिखाई दिया कि धूल-धक्कड़ के उत्पात की आशंका अब रह नहीं गई! वह आँधी थमी तो थी, पर आकाश का रंग-ढंग पूर्ववत् था। इस कारण किस क्षण वह उग्र न हो उठेगी, इसका निश्चय न था।

वह बोल उठा—जमना, तुम फिकिर न करो। हल्ली को खोजकर मैं जल्दी ही तुम्हारे सामने खड़ा न कर दूँ तो कहना। मैंने गुनित करा लिया है। यह गुनित अपने गयादीन पाँड़े का नहीं है। वे पंडित दिग्विजई हैं, कासी का जोतिस पढ़े हुए। दो रुपये लेकर ही भूत-भविस्स सब बता देते हैं। उनकी बात झूट कभी नहीं पड़ती। पूछ लो, रूपा से मैं अभी अभी कह रहा था कि हल्ली को लाये बिना मैं चैन न लूँगा, न लूँगा।

जमना ने क्षीण कण्ठ से पूछा—अभी कहाँ हो आये ?

अजीत ने कई गाँवों के नाम लिये। अन्तिम नाम पर जमना ने कहा—नयेगाँव तक!

"क्या करूँ जाना ही पड़ता है। भागने वाले लड़के ऐसी ही दूर की नातेदारी की सोचकर भागते हैं, जहाँ आसानी से किसीका ध्यान न जाय। अब आज दक्खिन की ओर के लिए निकलूँगा।

पंडितजी ने कहा है, वह उत्तर को ओर नहीं भागा, यही अच्छाई है। उत्तर दिसा का ओर-छोर नहीं है, वहाँ का गया लौटता नहीं!"

जमना ने पूछा—अभी तुम गऊ की कह रहे थे, कहाँ होगी ?

"वहाँ दूसरा कोई कुछ न कर सकेगा। मैं उसी ओर जा रहा हूँ, उसे भी देखूँगा। तुम किसी तरह की फिकिर न करो।"

अजीत को उठते देख जमना ने कहा—"ठहरो"—और वह भीतर चली गई। थोड़ी देर में लौटकर उसने अजीत की ओर रुपये बढ़ाये। विस्मित होकर बोला—ये कैसे ?

"कासीजी वाले पंडित की दच्छिना।"

म्लान मुख से अजीत ने कहा—यह कौन बड़ी बात थी; तुमने दिये या मैंने। अभी रहने दो, पीछे देखा जायगा।

जमना फिर भी हाथ बढ़ाये ही रही। खिन्न मन से अजीत को रुपये ले लेने पड़े।

(१८)

अजीत का अनुमान पूर्णतः नहीं तो अंशतः तो ठीक निकला। जिस कांजीहौस में गाय का होना उसने सोचा था, वह वहीं मिली। उसे साथ लेकर दूसरे दिन वह लौट आया।

गाय उसीने खोज निकाली, इसकी प्रसन्नता उसे बहुत थी, परन्तु आज वह धूप खा गया था। गाय को थान पर करके वह एक जगह मूँज की बुनी खाट लटका कर क्लान्त भाव से उस पर जा लेटा।

थोड़ी देर में पास ही जमना की आवाज सुनकर उसने

कहा—इधर सुनो तो।

वहाँ आकर जमना खड़ी हो गई। वह बोला—देखो, एक बात कहना भूल गया था। कांजीहौस में ढोर भूखे रहते हैं। वहाँ का मुंसी था तो हिन्दू ही, पर मुझे तो पूरा कसाई जान पड़ा। बीस पर्खे लगाकर तो उसने गऊ छोड़ी। मुसलमान होता तो वह इतना निरदई न होता। धरम की टेक उन जैसी हममें नहीं होती। तभी तो उनकी इतनी उन्निती है, जहाँ देखो, मुसलमान ही थानेदार-तहसीलदार हैं। अब, गऊ को आज अच्छी सानी देना न भूलना। वहाँ बेचारी को पानी तक मिला या नहीं, कौन जानें।

चुपचाप सिर हिलाकर जमना लौट गई। वह यही सब कर रही थी। परन्तु अजीत जमना के मुख से दो बातें सुनना चाहता था, इसलिए उसके मौन से वह खिन्न हो उठा।

थोड़ी देर बाद फिर उस ओर से जाते समय जमना सहसा रुककर खड़ी हो गई। दूसरी ओर करवट लिए हुए अजीत का हलका-सा काँखना उसके कान में पड़ गया था। उसने पूछा—क्या जी कुछ खराब है?

आधी करवट फेर कर अजीत ने देखा, जमना खटिया के पास आकर खड़ी है। "कुछ यों ही, धूप-ऊप लग गई होगी"—कहकर उसने फिर उसी ओर मुहँ फेर लिया।

जमना ने वहीं से अपना दायाँ हाथ बढ़ाकर अजीत के माथे पर धर दिया। बोली—अंग गरम है, लू तो नहीं खा गये?

अजीत ने थोड़ी देर के लिए आँखें मीच लीं। उसे जान पड़ा, जैसे उसका समस्त शरीर अवसन्न हो गया हो। किन्तु अपने को संयत करके उसने कहा—अंग वंग गरम कुछ नहीं है, इस समय तुम अपना काम देखो। यह तो लगा ही रहता है।

जमना ने फिर उसके माथे पर हाथ रखकर कहा—नहीं, माथा गरम है। ऐसे में खुले में रहना ठीक नहीं। उठो, खटिया भीतर डाल दूँ।

"भीतर ऊमस बहुत है। थोड़ी देर यहाँ आराम कर लेने से सब ठीक हो जायगा! अभी घर जा रहा हूँ।"

बिना कुछ उत्तर दिये जमना ने एक हाथ से उसे उठा दिया और खटिया भीतर ले जाकर उस पर एक दरी बिछा दी।

अजीत ने कहा—तुम तो ऐसा कर रही हो जैसे मुझे सन्न की बीमारी आ गई हो।

"पड़े रहना, जाना नहीं। मैं अभी आती हूँ।"

"जाती कहाँ हो,—सकसा और पेड़े के सरबत के लिए? लूह मुझे नहीं सता गई है, यह सब कुछ न करो। किसीको तुम जैसा बैद मिले तो फिर उसका राम ही मालिक है। दरद पेट का और दवा"—

"पेट में दरद है?"

"पेट में नहीं तो क्या आँख में!"—अजीत ने कहा—"आज इतवार है न? आज के ही दिन तो हली······इतवार के बिरत से पेट खाली था। और चलना पड़ा धूप में। तुम्हें इसीसे मेरा अंग गरम दिखाई दिया। कुछ है नहीं। अब जरा और सुस्ता कर घर जाता हूँ, तब सब ठीक हो जायगा।"

थोड़ी देर जहाँ की तहाँ स्तब्ध खड़ी रहने के बाद जमना ने कहा—देखो आज पारन यहीं होगा, जाना मत।

कहकर वह भीतर चली गई।

दिया के उजाले में अजीत जब थाली पर बैठ गया तब उसने कहा—देखो जमना, मुझ जैसे भूखे-टूटे आदमी को बहुत

सह देना अच्छा नहीं। कहीं रोज आ खड़ा होऊँ तो कठिनाई में पड़ जाओगी।

"ऐसे ही रोज आ खड़े होने वाले तो हो! आज जी कुछ ऐसा-वैसा न होता तो,"—

"राम करें रोज ऐसा ही जी खराब हो। माथे पर तुम्हारे तनिक हाथ धर देने से उस समय कैसी ठंढक पहुँच गई! इतना गुन किसी बैद के रस में न होगा, जितना तुम्हारे हाथ में है। मुझे लगता था, कल सबेरे कहीं ऐसा न हो कि मैं फिर-से जा ही न सकूँ। अब वह डर छूट गया है। वहाँ जाकर करारी लू लग भी जाय तो तुम माथा छू कर उसे तनिक में ही छूमन्तर कर दोगी! ऐसा कोई मन्तर मुझे भी सिखा दो।"

बड़ी बड़ी प्रशंसा के साथ भोजन समाप्त करके हाथ-मुँह धोकर अजीत आँगन में पड़ी हुई खाट पर इस भाव से बैठ गया कि अब दो एक काम की बातें करके वह जाना चाहता हो। उसने कहा—रूपा अभी तक नहीं आई, मैं जाकर अभी भेजता हूँ। और देखो, उपास कर करके ऐसा न करो कि जब हल्ली आवे तो वह तुम्हें खाट पर बेसुर्त पड़ी देखे।

"उपास करती कब हूँ। पापी पेट मानें तब तो"—कहकर उसने उस ओर मुँह फेर लिया।

"जैसा तुम उपास नहीं करती हो, वह मैं जानता हूँ। दुःख आदमी पर पड़ता है, जानवर इसे क्या समझें। तुम रंज न करो। रो रो कर सिर फोड़ दो तो इसीसे हल्ली लौटकर न आ जायगा। वह लौट आयगा, यह मैं होड़ बदकर कहता हूँ। उठो, जाकर कुछ खा लो। मैं तब तक उठूँगा नहीं जब तक खा न लोगी। चोले में भगवान का बासा है, उसे कलेस देने से पाप लगता है।"

जमना ने धीमे स्वर में कहा—कल खाया था, आज ऐसा ही बिरत रक्खा है।

"आज का बिरत मैं भी रखता हूँ, सूरज भगवान का वार है। पर अब तो हो चुका, समय पर पारन न करने से फल चला जाता है।"

जमना चुप रही।

"ऐसा समझता तो मैं भी अपना मुहँ न जुठारता। सोचा था, मेरे बाद तुम अन्न का अनादर न करोगी। जाने दो, तुम नहीं मानती तो न कहूँगा। सब जानते हैं, जिस बात की गाँठ बाँध बैठती हो उसे छोड़ती नहीं। तुम ऐसी ही हठवन्ती हो! एक बात कह जाऊँ। मैं बड़े तड़के उठ दूँगा, मिलकर जाने का समय न मिलेगा। एक पता चला है। अभी कहना नहीं चाहता था, पर तुम्हें धोखे में रखना ठीक नहीं। हो सकता है, लौट न सकूँ।"

जमना का हृदय काँप उठा। उसने पूछा—क्या पता चला है?

"बात ऐसी बहुत विश्वास की नहीं, उनमान भर है। मेरा कुछ हो जाय और मैं लौटकर न आ सकूँ तो समझना हली वहीं है। तब तुम पुलिस की मदद लेकर जाना। मैं बच न सकूँ तो लड़का तो मिल जायगा।"

व्याकुल होकर जमना ने प्रश्न किया—पता क्या चला है?

"नदी पार सिरसा की डाँग में कंजर लोग डेरा डाले हैं। पिछली बार यही लोग एक लड़का ले गये थे। हो सकता है, इस बार भी······पर यह उनमान है। ये लोग लड़कों का क्या करते हैं, कहीं ले जाकर बेचते हैं या······भगवान ही जानें उनकी माया! हली वहाँ होगा तो उसके जी को कलेस भले ही

हो, पर वह मिल जायगा। हाँ, मेरे लिए खतरा है, कहीं वे यह ताड़ गये कि मैं उनकी टोह लेने आया हूँ तो। मैं थानेदार साहब से कह जाऊँगा, वे मदद करेंगे। तो अब मैं जाऊँ।

"नहीं; मैं नहीं जाने दूँगी।"—जमना ने दृढ़ कण्ठ से कहा।

"जानें नहीं दोगी? रात को मैं यहाँ रह कैसे सकता हूँ।"

"वहाँ नहीं जाने दूँगी।"

विस्मय के साथ अजीत बोला—मुझे नहीं जाने दोगी तो फिर जायगा कौन? कोई ऐसा-वैसा आदमी उनका भेद नहीं पा सकता।

"मैं जाऊँगी।"

अजीत ने सूखी हँसी हँसकर कहा—तुम जाओगी वहाँ? जानती हो वे लोग कैसे डाकू होते हैं?

"कुछ हो, मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी। तुम्हारे ऊपर मेरा जोर क्या है जो तुम्हारे प्रान संकट में डालूँ। तुम्हारा उपकार मेरे रोम रोम में भिदा है। जैसा तुमने मेरे लिए किया, वैसा किसीका कोई सगा नातेदार नहीं करता। सामने आकर दो मीठी बातें कर जाने वाले सब हैं, गाढ़े में प्रान लगा देने वाले नहीं मिलते। दो चार दिन के भीतर ही बहुत देख लिया है। मैं तो यहाँ घर बैठकर रो-पीट लेती हूँ, कर-धर कुछ नहीं सकती। तुम न दुपहरी देखते हो न रात, रात-दिन एक कर रहे हो। अब बहुत हो चुका, तुम्हें और साँसत में न पड़ने दूँगी।"—कह कर जमना सिसक सिसक कर रोने लगी।

"मैं अपनी राजी से जाता हूँ, तुम जाने क्यों न दोगी?"

सिसकते सिसकते जमना ने कहा—मेरा तो भाग फूटा है,

दूसरे और किसीका रिन अब मैं और कैसे झेलूँ।

"रिन कहाँ जमना, कभी एक फूटी कौड़ी तो खरचने देती नहीं हो।"

"तुम्हारे ऊपर मेरा कोई जोर नहीं है जो तुम्हें दौड़ाती फिरूँ। रास्ता मैंने देखा है, मैं अपने आप चली जाऊँगी।"

"तुम जाओगी तो काम ही बिगाड़ोगी। मैंने कैसी मूरखता की जो तुमसे कह दिया!"—कहकर अजीत चुप होगया।

"काम न बिगड़े ऐसा करो। एक दिन तुमने कहा था"—

"क्या कहा था?"

"कहने में मुझे लज्जा नहीं है। फिर घर बसा लेने के लिए कहा था। तुम्हें मंजूर हो तो फिर मेरे लिए कहीं जाओ, मैं न रोकूँगी।"

"मुझे मंजूर न होगा? तुम्हारे साथ घर-गिरस्ती चलाकर मेरा जनम सुफल हो जायगा। मेरे भाग में ऐसा सुख कहाँ था। पर इस समय यह बात क्यों उठाती हो? मैं भला आदमी नहीं हूँ, पर इतना खोटा भी नहीं जो ऐसे में कोई बात पक्की करा लेना चाहूँ।"

"मंजूर न हो तो अभी साफ साफ कह दो। कोई बुराई की बात सुनी हो तो वह भी न छिपाओ। फिर मैं तुमसे किसी बात के लिए न कहूँगी।"

अजीत ने देखा, जमना की आँखें आँसुओं में भी अंगारे की तरह चमक रही हैं। एक क्षण के लिए उसके आनन्द की दीपशिखा किसी भय के झोंके से काँप-सी गई। परन्तु तुरन्त उसने कहा—तुम्हारी बुराई तो कोई वैरी भी नहीं कर सकता। और, मेरी मंजूरी की क्या पूछती हो, इससे बढ़कर आनन्द की बात मेरे

लिए नहीं है जमना। तुम्हारे हुकुम की देरी थी। पर मैं यह नहीं चाहता कि मेरे लिए तुम अपने मन के खिलाफ चलो। तुम्हारी राजी में ही मेरी राजी है। तुम रोओ मत।

कह कर अजीत ने जमना के घूँघट से ही उसके आँसू पोंछ दिये।

"तुम मेरे हल्ली को इतना प्यार करते हो, तुम्हारे लिए मैं अपने को काट काट कर फिकवा सकूँ, तब मेरे जी को सुख मिले।"—कहकर रोती हुई जमना कोठरी के भीतर चली गई।

आँगन में भीत के एक कोने को स्वच्छ चाँदनी ने आकर लीप दिया था, उसके कारण वहाँ के अन्धकार में भी एक तरह की दर्शनीय उज्वलता आ गई थी। कोठरी के भीतर से जमना का अस्फुट रोदन सुनाई दे रहा था और शेष सब सन्नाटा। अजीत जहाँ का तहाँ निस्तब्ध होकर खड़ा था।

(१६)

हीरालाल पर ढेला चलाकर हल्ली भागा। उसने यह नहीं सोचा कि वह कहाँ जा रहा है। उसे उस समय भागना था।

एक जगह वह रुका, उसने इधर उधर देखा और निर्जन होने पर भी वह और आगे बढ़ गया।

चलते चलते उसने सोचा—अभी नहीं, साँझ का झुटपुटा हो जाने दो। जिस समय लौटूँगा उस समय अँधेरी हो जायगी, सबके घर भीतर से बन्द होंगे; कहीं कोई नहीं, चारों ओर सुनसान और सन्नाटा। जाकर बगल वाले उसारे में इस तरह पड़ रहूँगा कि किसीको सुगसुग न हो। सबेरे किसी काम से वहाँ

पहुँचकर माँ चौंक पड़ेंगी—अरे हली तो यह है !—इस कल्पना से उसे ऐसा आल्हाद हुआ कि जैसे आँख-मिचौनी के खेल में उसने कोई बड़ी विजय पा ली हो।

धुन में डूब कर वह आगे ही बढ़ता गया। उसने देखा, वह वन में है। आस पास कोई नहीं दिखाई देता। भूमि नीची-ऊँची; कहीं गहरे भरके और कहीं उँचाई पर छोटे-मोटे टीले। दूर तक वृक्ष ही वृक्ष दिखाई देते हैं। मानों यह वृक्षों की बस्ती हो !

रुककर उसने विचार किया कि वह कहाँ आ गया है। गाँव के आसपास की भूमि उसकी देखी हुई थी। यह स्थान भी उसके लिए अज्ञात न था, यहाँ वह कई वार आ चुका होगा। फिर भी उसकी समझ में न आया कि गाँव की गैल पाने के लिए वह किस पगडंडी का सहारा ले। उसकी स्थिति उस मनुष्य जैसी हुई जो अपनी ही महानगरी की गलियों में भटक जाता है।

निकट में कहीं किसी आदमी के न होने से दूर एक जगह कुछ बकरियाँ चरते देखकर ही उसे सन्तोष हुआ। नीची-ऊँची भूमि में, यहाँ वहाँ झड़बेरी के सूखे झाड़ खड़े थे; उनकी एवं बबूल के छोटे-मोटे रूखों की पत्तियों को वे उचक उचक कर मुखस्थ कर रही थीं। हली को विश्वास हुआ; वह रास्ता पा जायगा, देर भले ही कुछ हो। और देर कुछ हो जाय, इसमें बुराई नहीं है।

परन्तु उसके लिए यहाँ की सब पगडंडियाँ, उन बकरियों की तरह ही एक रूप हैं। उसमें वह परिचय-बोध नहीं, जिससे उन सबको अलग अलग नाम देकर वह पहचान ले।

कुछ सोचकर एक पगडंडी पर वह चलने लगा। फिर भी उसने कुछ ऐसा अनुभव किया कि विजनता के इस कूप में से निकलने के लिए उसने जिस पतली रस्सी का सहारा लिया है

वह बीच में ही छिन्न होकर उसे और गहरे में पहुँचा सकती है।

थोड़ी दूर और चलने के बाद उसे सन्तोष हो गया कि वह बहुत नहीं भटका। वहाँ से उसे एक ध्वंस दिखाई देने लगा था। यह था किसी पुराने बाग का अवशेष। वृक्ष वन्य हो गये थे, चहार-दीवारी गिर चुकी थी। एक ओर ईंट-चूने की कुछ दीवारें खड़ीं तो थीं, परन्तु छत का बोझा उतार कर उन्होंने नीचे रख दिया था। उनमें जगह जगह दुधी, घास और पीपल के छोटे छोटे बिरवों ने उगकर इसी समय उन्हें एक प्रकार से नीचे की समतल भूमि समझ लिया था। वहाँ केवल एक कुँआ ऐसा था जो जीर्ण हो जाने पर भी पानी के कारण आने जाने वाले यात्रियों और बैलगाड़ी वालों को अपनी ओर आकृष्ट करता था। दल के साथ हली कई बार यहाँ तक खेलते-खेलते आ चुका था। उसके गाँव से यह डेढ़ कोस से अधिक न होगा।

कुएँ के समीप वट की घनी छाया में एक बैलगाड़ी ढिली हुई थी। गाड़ी के साथ अपने को भी विश्राम देने के लिए उसके यात्री नीचे उतर आये थे। पुरुष कुएँ में लोटा छोड़कर पानी खींच रहा था, स्त्री एक पोटली में से कुछ निकालकर उसे फिर गाड़ी के एक कोने में रचा रही थी। दो बच्चे थे, वे बैलों से कुछ दूर हटकर प्रसन्न मन से खेल रहे थे। लड़का तीन चार साल का, उसकी बहिन छः सात की। हली कुएँ पर सुस्ताने के लिए बैठकर वय के उन सजातीयों के खेल में आमोद लेने लगा।

लड़का चिल्ला उठा—माँ, जिजिया मुझे मारती है।

माँ ने डाँटा—भैया को मारती क्यों है री ?

"मारती नहीं हूँ माँ। जानें किसकी जूठन की दतून-सी उठा रहा था, मैंने रोक दिया है।"—कहकर लड़की हँसने लगी।

हल्ली को उसकी हँसी बहुत प्यारी लगी। उसकी इच्छा हुई कि जाकर उसके साथ खेलने लगे।

बच्चा बोला—मैं कुआँ खोद रहा हूँ, जिजिया खोदने नहीं देती। इसमें पानी निकलेगा।

"बाः खोदने क्यों नहीं देतीं, मुझे तो प्यास लगी है!"—कहकर हल्ली झट वहाँ जा पहुँचा।

एक सूखी लकड़ी में नोंक निकालकर उसने बच्चे के खननकार्य में सहयोग किया। कुछ गहरा हो जाने पर भी जब कुएँ में पानी नहीं दिखाई दिया, तब उसने एक तरकीब सोची। बच्चों के पिता से लेकर वह अपनी अंजुली में पानी भर लाया और उसने गढ़े में छोड़ दिया।

लड़की को भी कुछ सूझा। वह जाकर अपने पिता के हाथ से लोटा का लोटा छीन लाई और पतली धार छोड़ती हुई बोली—तुम्हारा पानी सूख गया, मैंने निकाल लिया है।

हल्ली ने कहा—ठीक बात, कुआँ खोदा छोटे ने, पानी निकला तुम्हारे हाथ। अब कहीं कोई इसमें गिरकर डूब न जाये!

भाई-बहिन अपने कुएँ की परिक्रमा कर रहे थे, हल्ली भी उनमें जा मिला। माता ने दूर से देखकर कहा—बाः किसका बालक है, देखकर छाती सिराती है!

भाई-बहिन के साथ कुएँ का चक्कर देते देते हल्ली जमीन पर आ रहा, जैसे ठोकर खाकर गिर पड़ा हो। बालक-बालिका के सहारे उठकर उसने कहा—बचा लिया तुमने, नहीं तो कुएँ में गिरकर डूबने में कसर न थी!

तीनों बालकों के मृदु कण्ठ की हँसी वहाँ एक साथ गूँज गई। बच्चों की माता को अपनी ओर उन्मुख देखकर अब

हल्ली ने परिचय पूछा—गाड़ी कहाँ जा रही है काकी ?

"जगदम्बा के मेले में।"

हल्ली प्रसन्न हो उठा—क्या अच्छा मेला है वाह ! परसाल हीरा गया था। मैं भी वहीं जाता हूँ। वहाँ की जगदंबा की ऐसी कला है कि जो मनकामना करो वही पूरी होती है। पहले कभी हो आई हो काकी ?

उसने कुएँ पर अपने पति की ओर तिरछी दृष्टि डालकर कहा—वे हो आये हैं, जनी मानुसों को कोई कहीं नहीं जाने देता।

"मैं जाने दूँगा, तुम मेरे साथ चलो काकी। मैं अच्छी तरह दरसन करा दूँगा। वहाँ तुम जो जाचना करोगी वह पूरी होगी। जगदंबा का प्रताप ऐसा ही है। हमारी पोथी में लिखा है—'परबत पर खोदे कुआँ कैसे निकसे तोय ?' पर उनकी दया से वहाँ परबत पर भी मीठे पानी का कुण्ड है। परबत पर खोदे कुआँ ऐसे निकसे तोय !

अपरिचिता के पति ने कहा—देर बहुत हो गई है, अब तक पिछली गाड़ी आ जानी चाहिए थी। मैं देख आऊँ, कुछ टूट-टाट तो नहीं गया।

स्त्री ने उधर ध्यान नहीं दिया। उसे हल्ली से बात करने में आनन्द आ रहा था।

पुलिस के दो सिपाहियों को उस ओर आते देखकर उसे ध्यान आया कि उसके स्वामी अब तक नहीं लौटे। ये लोग कुछ पूछ ताँछ करने लगें तो मैं क्या करूँगी। उन्हें ऐसे में ही अकेला छोड़कर जाने की सूझती है।

सिपाहियों के निकट आने के पहले ही बालक और बालिका

माँ के पीछे आकर खड़े हो गये। हल्ली बोला—डरते क्यों हो, वे तो थाने के आदमी हैं।

उसकी माँ भी शंकित थी, इसलिए उसे हल्ली के इस निःशंक भाव से सहारा मिला। एक बार कहीं जाते समय उसकी गाड़ी पुलिस वालों ने यह कहकर रोक दी थी कि साँझ को गाड़ी जाने देने का हुक्म नहीं है; लुटेंगे तुम, आफत पड़ेगी हमारे सिर। कुछ पूजा-पत्री हो जाने ही पर उस बार छुटकारा मिल सका था। आज भी कहीं वैसी झंझट आ पड़े तो?

"गाड़ी कहाँ जा रही है?"—कर्कश कण्ठ से एक सिपाही ने पूछा।

हल्ली ने कहा—जमादार साहब राम राम! गाड़ी जगदम्बा के मेले में जा रही है। आगे के गाँव में रात बिताकर भुनसारे के पहर फिर चलेंगे।

दूसरे सिपाही ने संकेत करके कुछ पूछा। पहले ने उत्तर दिया—जाने भी दो, अभी बहुत दिन है।

"जमादार साहब राम राम! यह लड़का बहुत डरता है, इसे साथ लेते जाइए। समझा दीजिएगा।"—कहकर जाते हुए सिपाहियों को हल्ली ने हाथ जोड़े।

एक ने हँसकर कहा—"लड़का किसी का है चंट!"—और वे चले गये।

स्त्री की जान-सी बची। उसने ऐसा लड़का न देखा था जो पुलिस के आदमियों से इस तरह निडर होकर बातचीत करे। लड़कों की तो बात ही क्या, उसे अपने पति से भी ऐसी आशा न थी।

थोड़ी देर में दूसरी गाड़ी के साथ उसका पति आ गया और जब गाड़ी जोतकर हाँकी गई तब हल्ली सहयात्री हो चुका था।

(२०)

कंजरों के डेरे से हारा-थका अजीत गाँव में पहुँचा ही था कि उसे हल्ली के लौटने का समाचार मिला। जमना की पौर में जाकर उसने देखा कि वह अनेक लड़कों के बीच में बैठकर अपना भ्रमण-वृतान्त सुना रहा है।

अजीत को देखकर लड़के उत्साह से बोल उठे—काका, लौट आये हैं!

अजीत ने हँसकर कहा—तुम तो इस तरह कहते हो जैसे मैं हिरा गया होऊँ और अब तुमने मुझे खोज निकाला है।

हल्ली ने उससे लिपट कर कहा—काका, तुम कंजरों से बात करने क्यों गये, वे तुम्हें मार डालते तो क्या होता?

"मार डालते तो अच्छा होता हल्ली। तू ने बहुत कलेस दिया रे!"—कहकर अजीत ने उसे एक हल्की चपत जमा दी।

"काका, तुम जल्दी लौट आये यह अच्छा हुआ, नहीं तो जमना काकी तुम्हारे लिये जाने वाली थीं।" कहकर हीरालाल ने वहाँ अपनी उपस्थिति भी प्रकट की।

"तुम हो!"—कहकर अप्रसन्नता की दृष्टि से अजीत ने उसे देखा।

हल्ली बोला—काका, हीरा से नाराज न हो। वह मेरा गुइयाँ बन गया है। गाली उस दिन उसने मुझे न दी थी, दी थी कोतवाल को। मैं कोतवाल बनकर उसका पीछा कर रहा था।

"हल्ली ने भी तो ढेला मुझ पर नहीं चलाया था।"—हीरालाल बोला—"चोर पर चलाया था। चोर को ऐसी ही सजा

दी जाती है।"

हल्ली को प्यार करके अजीत रसोई घर के सामने जा खड़ा हुआ। जमना चूल्हे पर चढ़ी कढ़ाई में करछुली चला रही थी। सिर का वस्त्र नीचे खिसका हुआ था। और चूल्हे की गरमी से उसके पाण्डु मुख पर स्वेदकण झलक आये थे। आहट पाकर उसने सिर पर वस्त्र खींचा और सँभल कर बैठ गई। किसी विचित्र छटा ने अजीत को वहाँ क्षण भर के लिए स्तब्ध कर रक्खा।

उसने कहा—देखो, मैंने कहा था ना कि हल्ली जल्द लौट आयगा? भगवान् बड़े दयासागर हैं, वे सबकी लाज रखते हैं।—कब आया था?

जमना बोली—सबेरे ही। दिखाया था, पर तुम रात रहते ही चले गये थे।

"उस समय न जाता तो इस समय लौट कैसे सकता था? देखो, अब उसे किसी तरह की ताड़ना न करना।"

अजीत ने देखा, जमना उसके पास उठकर आ गई है। आकर वह झुकी और उसके दोनों पैर छूकर उसने अपने हाथ माथे से लगा लिये!

वह सहसा संकुचित हो उठा। उसे बोध हुआ कि जो वस्तु उसके पैरों का स्पर्श कर गई है, उसे कहीं वह अपने माथे पर रख सकता!

जमना बोली—मैं कुछ न करूँगी, ताड़ना करना हो तुम करो, न करना हो तो तुम न करो। मैं तो खो ही बैठी थी।

"मुझसे—मुझसे तो कुछ नहीं हो सका जमना।"

"नहीं हो सका, यह मैं तुम्हारे कहने से मान लूँगी? जब तुम हल्ली के लिए सब कुछ करने को तैयार हो गये तभी भगवान्

ने उसे लौटाया। भगवान् देख लेते हैं कि उनके दिये दान के लिए आदमी कितना दुःख सह सकता है। आज दिन भर यही बात मेरे मन में आती रही है। सुख के लिए दुःख का भरपूर मोल देना पड़ता है। तुम इतना न करते तो न जाने मेरे भाग में क्या बदा था। मैं तो ऐसी अभागिन हूँ कि सदा सब कुछ खोती ही आई हूँ, कभी"—

रुलाई से उसका गला रुँध गया। आगे वह कुछ न कह सकी।

(२१)

अजीत ने सोचा न था कि ऐसी बात अनायास इस तरह हो सकती है। किसी निगूढ़ आकर्षण से वह जमना के प्रति आकर्षित हो उठा था। आकर्षण कदाचित् रूप का था। बात कुछ ऐसी हुई कि जैसे निर्जन में जाते जाते किसी सरिता की स्वच्छ क्रीड़ा-लहरी उसने देखी। जी भर कर तरङ्गों के साथ खेल लेने के लिए वह तत्काल गहरे में उतर पड़ा था। उतर तो पड़ा था, पर तत्काल ही उसे मालूम हुआ कि शीत की कँपकपी यहाँ बहुत देर आनन्द के लिए न टिकने देगी। फिर भी एक बात हो सकती है। जब तक यहाँ है, वह अपनी मलिनता क्यों न दूर कर ले? वह ऐसा ही करेगा।

पहले पहल जगराम ने ही विचार का यह धक्का उसे दिया। उसने जमना के लिए जैसी अपमान जनक बात कही थी, उसे वह सह नहीं सका। उसकी इच्छा उसे पीट तक देने की उस दिन हो गई थी। वह जानता न था कि जमना के विषय में उसके

भीतरी मन में कहीं इस प्रकार का आदर भी छिपा हुआ है। जगराम का रुख देखकर उसे सन्देह हुआ था कि कहीं यह शहरी गुण्डा उसकी अनुपस्थिति में आकर यहाँ कुछ उत्पात न करे। उस कल्पित उत्पात के विरुद्ध उसने उसी समय अपने को प्रहरी की भाँति लड़ने-मरने के लिए तैयार खड़ा पाया। कई दिन तक अपने आँख-कान खोलकर वह चौकस रहा। उसे शंका थी, जगराम किसी दिन अकेले में आ पहुँचेगा। वह जब नहीं दिखाई दिया, तब उसका भय से घबराया हुआ चेहरा उसकी आँखों के सामने रह रहकर प्रकट होने लगा। उसने सोचा, जगराम क्या कहता होगा कि ये देहाती भी कैसे गँवार होते हैं! अपने उस व्यवहार के लिए वह मन ही मन लज्जित हुआ। उसने कहा—वह आदमी तो फिर भी अच्छा है। उसने जैसी बातचीत की थी, उससे अच्छी कुछ उसके पास थी ही नहीं। फिर भी वह कहकर रह गया, उसने कोई फन्दा नहीं फैलाया। मैं अपनी तो कहूँ! कोई अच्छे-भले रास्ते से जा रही हो तो उसे गुमराह करने का मुझे क्या हक है। सोचते सोचते जमना के एक विचित्र रूप का अनुभव उसे हुआ। अनुभव ही हुआ। ऐसा नहीं कि नेत्र और वाणी के निकट वह स्पष्ट हो सका हो। मानों कहीं मौसम बहुत बुरा है। सब ओर बादलों ने गहरी अँधेरी फैला रक्खी है। रह रहकर बिजली कड़कती है। गड़गड़ाहट ऐसी है कि अभी ओलों के पत्थर बरसेंगे। ऐसे में कोई महिमामयी घृत का दीपक अपने अंचल की ओट करके किसी मन्दिर की ओर बढ़ती जा रही है। पथ पर प्रकाश छिड़ककर उसे स्निग्ध करती हुई बढ़ती ही जा रही है। इधर-उधर से प्रकट हो पड़ने वाले किसी भय की आशंका उसे रत्ती भर नहीं है। अंचल से छनकर दीपक की

मधुर ज्योति उसके मुख पर पड़ती है, तब बोध होता है कि इस अँधेरे के घन-समूह में कहीं यह बिजली ही सह्य-मधुर होकर न प्रकट हो पड़ी हो ! अजीत की इच्छा हुई कि वह कहीं से लाकर इस देवी के ऊपर फूलों की बरसा कर दे। पर तत्काल ही उसके भीतर चोट-सी पड़ी कि वह यह नहीं कर रहा है। जो कुछ उसे करना चाहिए, नहीं कर रहा है। वह तो इस देवी का अपहरण करने के लिए किसी डाकू की तरह बीच में घात लगाये खड़ा है। कैसी भयंकर बात है यह ! वह अपने कृत्य की ओर देखता नहीं है, देखता है दूसरे की ओर। नहीं, उसे अपने को बदलना होगा।

इसके बाद हल्ली भागा। उसे खोज लाने के लिए उसने दिन और रात एक कर दी। बीच बीच में सोचा करता कि हल्ली को मिल जाने दो, फिर वह यहाँ से हट जायगा। वह दुर्बल है। उसे अपने ऊपर विश्वास नहीं है कि वह दृढ़ रह सकेगा। उसे निश्चय यहाँ से हटना ही होगा। वह हटेगा क्यों नहीं। पौरुष का झूठा अभिमान वह मन में नहीं आने देगा। हटने में क्या पौरुष नहीं है ? है, बहुत है। इतना है कि कभी कभी संसार भर का पौरुष उसके सामने फीका पड़ जाता है। संसार से मुहँ फेर लेने वाले साधारण नहीं होते। दुर्बल उन्हें कौन कहेगा ? कौन कहेगा कि उनमें पुरुषार्थ न था ? अजीत में पुरुषार्थ नहीं है। वह बहुत साधारण व्यक्ति है ! परन्तु हाँ, यदि वह हट सके, यदि वह हट जाय, तो यह उसके लिए किसी बड़े पुरुषार्थ से कम न होगा।

बहुत कुछ इसी तरह सोच रहा था, इतने में जमना ने उस रात अचानक उसे वैसा वचन दे डाला। अब वह क्या करे ?

क्या अब भी वह पीछे हट जाय ? नहीं, अब यह उससे कुछ नहीं हो सकता। इतना बल उसमें नहीं है कि इतना त्याग वह कर सके। जब वह अकेला पड़ता है, तब जमना की ही याद उसे आती है। जमना की याद आई नहीं कि और कुछ उसे याद नहीं रहता। उस समय सब कुछ सोचा समझा एक ही साथ उसे भूल जाता है। वह क्या करे, वह विवश है।

कभी कभी उसके मन में संशय उठता है। सोचता है, जमना बदल भी तो सकती है ? बदल जाना असम्भव नहीं है। प्रतिदिन अदालतों में यही सब तो होता रहता है। किसीने दुचित्ते में कोई ऐसी वैसी बात कह डाली तो क्या उसका पालन करना ही होगा ? मामले-मुकद्दमे में भी वह देखता है कि कोई बात लिखी-पढ़ी होने पर भी उस समय तक ठीक नहीं समझी जाती, जब तक उसका कागज सरकारी न हो। कागज सरकारी चाहिए। निराश होकर वह कहता—यही तो अँगरेजी अमलदारी में बुराई की बात है !

खेद होता है उसे इस बुराई के इस बुरेपन पर कि स्वयं अपने आप वह इसे बुरा नहीं समझता ! सच से अधिक समझकर बहुत से उलटे काम वह स्वयं करता है। सोचता है, देवता भी मनुष्य का रूप धर कर मनुष्य की भलाई करने आते हैं। वे झूठा रूप लेते हैं, इसलिए क्या झूठे हो गये ! नहीं वे झूठे नहीं हैं। उस समय वे सत्य से कुछ बढ़कर हैं ! इसी धारणा के वश होकर छोटी-मोटी पंचायतें उसने स्वयं निबटाई हैं। जमना भी कुछ मूर्ख नहीं है, जो ऐसी बातें न समझे। वह बदल जाय तो उसे रोकने वाला होता कौन है ?

नहीं, जमना ऐसी मूर्ख नहीं है। वह हमारे से बहुत ऊँची

है ! मैंने उससे कितना कहा कि मोतीलाल चौधरी के कागजों में खामी जान पड़ती है। वह इनकार कर दे—मुझे किसीका कुछ नहीं देना। उसने नहीं माना, किसी तरह नहीं माना। मान वह कैसे सकती है ! किसी तरह मान जाय वह ऐसी धातु की नहीं बनी। वह रतन है रतन ! वह कट-कुट सकती है, टूट-फूट सकती है, चूर चूर भी हो सकती है। सब कुछ हो सकती है, परन्तु ऐसी नहीं हो सकती कि आँच देकर, गलाकर, अपने मन के माफिक ढालकर चाहे जैसी बना ली जाय। उसका कुआँ हाथ से निकलता है, निकल जाय, अभी निकल जाय, इसकी परवा ही क्या ? उसका घर-बार नीलाम होता है, हो जाय, अभी हो जाय, इसका डर ही क्या ? उसके पास इन सबसे बढ़कर एक ऐसी चीज है, जिसका कोई मोल नहीं। उसे उसके हाथ से कोई ले नहीं सकता। डरा धमका कर, लोभ-लालच देकर कोई उसे भुला लेगा, यह असम्भव है। वह अपनी बात से डिगेगी नहीं। मैं कहता हूँ डिगेगी नहीं।

अजीत बहुत कुछ इसी तरह सोचता है। परन्तु वह जल्द-बाजी नहीं करना चाहता। जहाँ लिखा-पढ़ी में कचाई हो, वहाँ महाजन को शान्ति से काम लेना पड़ता है। ऐसा न किया जाय तो ईमानदार आसामी से भी कुछ खुटका होता है।

आज जिस समय वह जमना की पौर में पहुँचा, वह सामने नाज की थाली रक्खे हुए उसमें से मिट्टी बीन रही थी। उसने बिना कुछ कहे सिर पर धोती का छोर कुछ आगे को खींच लिया। स्त्री का आगन्तुक पुरुष के लिए यह एक तरह का मौन नमस्कार है। परन्तु इस पर ध्यान न देकर अजीत ने हली की ओर लक्ष्य करके कहा—कोई मुझसे बात नहीं करता, मैं जाता हूँ।

हल्ली माँ से पैसे लेकर स्याहीसोख का एक ताव बाजार से लाया था। उसमें से एक टुकड़ा काटकर बाकी को छिपाकर वह इसलिए रख रहा था कि राधे, हीरा या और कोई लड़का देख लेगा तो माँगे विना न रहेगा। उसे अँधेरे आले में एक कपड़े के नीचे रखकर वह दौड़ा आया और अजीत से लिपट गया। बोला—जाते कहाँ हो काका, मैं तो आज तुम्हें पकड़ने वाला था।

"अच्छा पकड़ो, मैं भागता हूँ। देखूँ, कैसे पकड़ते हो।"

"यही सही। दौड़ देखो! मैं भागने न दूँगा। होड़ बद लो।"

"होड़ बदलूँ? होड़ के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। समझ लिया, मिठाई खाने की तरकीब लगा रहे हो। सोचते होगे, यह बूढ़ा आदमी मेरे सामने क्या दौड़ेगा। नहीं भैया, मैं तुम्हारे साथ होड़ न बदूँगा।"

नहीं तुम बूढ़े नहीं हो। कहाँ,—तुम्हारा एक बाल भी भूरा नहीं हुआ।"

"ऐसे भी बूढ़े होते हैं। बाल तो तुम्हारी माँ के भी भूरे नहीं हुए। क्या वे बूढ़ी नहीं हैं! पूछ देखो उनसे।"

हल्ली ने विरक्ति पूर्वक सिर हिलाकर कहा—मेरी माँ को बूढ़ी मत कहो काका। डोकरी मुझे बहुत नापसन्द है। हमेशा खाँव-खाँव काँव-काँव करती रहती है।

जमना हँसी। बोली—हल्ली को बिजैराम की दादी पर गुस्सा है। उन्हें सब लड़के मिलकर खिझाया करते हैं। क्यों रे, मैं जब वैसी हो जाऊँगी तो मेरे साथ भी तू ऐसा ही करेगा?

अजीत कुछ कहना चाहता था, तब तक हल्ली ने कहा—नहीं माँ, तुम वैसी कभी न होगी। वह तो हमेशा लड़कों को

काटने दौड़ती है ।

"अच्छा, बिजैराम की दादी के दाँत हैं ?"—अजीत ने पूछा।

"दाँत होते तो हममें से किसीको बचने न देती । तो अब दौड़ देखो ।"

"झूठी बात ! मैं दौड़ नहीं सकता । बैठकर देख लो, कौन कितनी देर बैठ सकता है ।"

इस पर जब हल्ली बैठने के लिए तैयार दिखाई दिया, तब अजीत ने कहा—यहाँ तुम्हारी माँ नाराज होंगी । बाहर नीम के नीचे चलकर बैठें ।

"यहीं बैठो । माँ नाराज नहीं होंगी ।"

"होंगी ! उन्होंने तो मुझसे बैठने के लिए कहा ही नहीं है।"

"नाराज होगी माँ ?"

जमना ने सिर हिलाकर प्रकट किया, नाराज नहीं होंगी ।

"देख लो हल्ली, उन्होंने सिर हिलाया है कि नाराज होंगी।"

हल्ली दौड़कर माँ के पास गया । झुककर उसके कन्धे पर हाथ रक्खे हुए उसने पूछा—माँ, नाराज होगी ?

"कैसा लड़कपन करता है ! कह तो दिया नाराज नहीं हूँगी।"

अजीत ने चबूतरे पर बैठते बैठते कहा—तुम्हारे कहने से 'हाँ' कर दिया है, नहीं तो वे नाराज तो हैं ।

इस बीच में जमना की थाली का नाज बिन चुका था । उठकर वह भीतर चली गई । थोड़ी देर बाद पानी खींचने के लिए घड़ा और रस्सी लिये हुए वह कुएँ की ओर जाती दिखाई दी ।

अजीत भी उठ खड़ा हुआ ।

(२२)

अजीत को दूसरे दिन के लिए हली से निमन्त्रण मिल गया था। कहना कठिन है कि इसके बिना वह आता ही नहीं। पर यह ठीक है, दूसरे दिन फिर वह आ पहुँचा। पहले दिन की तरह जमना और हली वहीं थे। उसे सन्तोष हुआ कि वह अच्छे मुहूर्त्त में यहाँ के लिए चला था।

उसने कहा—भागते कहाँ हो हली? अब आज देखेंगे कि हारता कौन है।

"कल तुम हार गये थे। अब आज होड़ बदनी पड़ेगी।"

"होड़ के लिए रुपये-पैसे मेरे पास नहीं हैं। मैं हारा कब था? आज दूसरे तरह की होड़ बदें, तुम कहो तो।"

"कैसी दूसरे तरह की?"

"इस तरह की कि तुम हार जाओ तो मैं तुम्हें अपने घर ले जाऊँगा"—

"नहीं, मैं माँ के बिना नहीं रह सकता।"

"और मैं हार जाऊँ तो तुम्हारे घर आकर मैं रहूँगा। मैं काम-काज न करूँगा, तुमको मुझे यों ही रोटी-कपड़ा देना पड़ेगा।"

हली ने कहा—यह बात अच्छी है। तुम हमारे घर आओ तो रात भर तुमसे कहानी सुनता रहूँ। तुम्हें सोने न दूँ!

"तुम अपनी माँ से तो पूछो। वे मुझे मारकर भगायँगी तो नहीं?"

"नहीं नहीं, यह एक तरह का जुआ है। अरजुन ने जुआ खेला था, इसलिए उन्हें बनोबास करना पड़ा। माँ ने बताया था। क्यों माँ, जुआ नहीं है यह?"

जमना ने उत्तर नहीं दिया। सिर झुकाये चुपचाप नाज की थाली में से नाज बीनती रही। अजीत ने कहा—देखो, वे कहती हैं जुआ नहीं है।

हल्ली ने कहा—यह बात छोड़ो। माँ से कल की पञ्चायत करा लो। क्यों माँ, कल कौन जीता था ?

जमना ने कहा—मैं नहीं जानती।

अजीत बोला—तुम कैसे नहीं जानतीं ? तुम सब जानती हो। तुम्हें पञ्चायत करनी पड़ेगी। मैं जानता हूँ, तुम बेठीक न करोगी। तुम जो कुछ कह देती हो उससे नहीं टलतीं। तुम्हें चाहे जितना नुकसान हो, दुःख हो, भलाई-बुराई हो, कुछ भी हो, जो बात कह देती हो, उसे पूरा करती हो। क्यों हल्ली, ठीक कह रहा हूँ ?

हल्ली ने प्रसन्नता से कहा—हाँ।

"इस तरह नहीं। यह कहो कि जो बात कह देती हैं, उसे पूरा करती हैं या नहीं।"

"माँ कभी झूठ नहीं बोलतीं। हीरा जैसी नहीं हैं।"

जमना ने कहा—हल्ली को हीरालाल नहीं भूलता। कहीं फिर झगड़ा न कर बैठे।

"हीरा ऐसा ही है कि उसके साथ जब जो न हो जाय, थोड़ा समझो।"

"नहीं काका, अब वह ठीक है। अब वह मुझसे लड़ेगा नहीं।"

बात का सिलसिला बदलकर अजीत ने हल्ली से पूछा—आज महन्त की बावड़ी की ओर जाते तुम्हें देखा था। खेलने जा रहे थे ?

"खेलने नहीं जा रहा था। लड़के कहते थे, वहाँ बाघिन

आ गई है।"

जमना ने कड़े स्वर में कहा—तो वहाँ तेरे जाने का क्या काम था ?

"बाघिन कहाँ थी ? लड़के झूठी उड़ा रहे थे। कहते थे, दूर के एक गाँव में चम्पा धोबिन है। वही बाघिन बनकर आस-पास के गाँवों में लोगों को मारकर खा जाती है। मैंने कहा—चलो मैं देखता हूँ, कैसी है।"

अजीत ने पूछा—धोबिन कैसे बाघिन हो गई ?

"लड़के कहते हैं कि चम्पा का घरवाला कलकत्ते जाकर वहाँ का जादू सीख आया था। घर आ कर अपनी घरवाली से लड़ बैठा और एक दूसरी धोबिन वह अपने घर बुला लाया। इस पर चम्पा बहुत बिगड़ी। उस नई धोबिन को वह मार कर भगाना चाहती थी। तब चम्पा के घरवाले ने क्या किया कि एक मन्तर-जन्तर पढ़ा। उसने सोचा था कि चम्पा को चिड़िया बनाकर उड़ा दूँगा। पर हुआ क्या कि मन्तर-जन्तर में उसने कुछ भूल कर दी। चम्पा चिड़िया तो न बनी, हो गई बाघिन। उसने उस नई धोबिन को वहीं ढेर कर दिया और वह घरवाले की ओर झपटी। वह भाग बचा। बच्चू अब भागे भागे फिरते हैं। जब तक धोबी बाघिन के सिर पर हाथ रख कर जन्तर-मन्तर नहीं करता तब तक चम्पा बाघिन ही रहेगी। यह हो कैसे सकता है ? धोबी उसके पास पहुँचा नहीं कि उसकी बोटी बोटी नुची। जैसा खराब आदमी था वैसी ही सजा मिल रही है। राम करें उसका"—

जमना ने कहा—कैसी वाहियात बातें मुँह से निकालता है ?

"मैं कब निकालता हूँ। लड़के कहते थे। कोरी गप है,

किसीने बनाकर खड़ी कर दी। लड़के समझते होंगे मैं डर जाऊँगा। मैं इस तरह नहीं डरता। जाकर सब तरफ घूम आया,—बाघिन की छाया तक नहीं दिखाई दी। दिखाई कैसे देती, बात सच होती तब तो? एक बात है काका। बात गप भले हो, पर सुनने में लगती अच्छी है।"

"धोबिन निकली समझदार!"—अजीत ने कहा—"ऐसी न थी कि घरवाला चाहे जैसे बुरे काम करता रहे और वह उसीकी माला लिए बैठी रहती। बहादुर थी बहादुर! तुमने अच्छी बात सुनाई।"

"अच्छी बात तो तब होती काका, जब चम्पा अपने धोबी को भी वहीं जप लेती। बड़ा बुरा आदमी था।"

अजीत ने कहा—बुरा और कैसा होता है? जो अपने घर के प्रानी को कलेस दे, उसका मुहँ नहीं देखना चाहिए।

हल्ली बोला—मुझे ऐसा लगता है कि यह बात सच होती! चम्पा जब सचमुच की बाघिन होकर अपने आदमी के ऊपर—

जमना ने शासन के स्वर में कहा—चुप रहता है कि नहीं? खबरदार, जो अब कभी ऐसी बातें तेरे मुहँ से सुनी!

हल्ली सहम गया। वह नहीं समझ सका कि इसमें बुरा क्या है। उसने तो सोचा था कि मैं जब माँ को यह सब सुनाऊँगा, तब वे बहुत प्रसन्न होंगी। बाघिन देखने जाकर सच झूठ की खबर ले आने के लिए कोई लड़का तैयार न था, तब वही अगुआ बनकर गया था। इसमें उसके लिए किसी तरह का सन्देह न था कि यह सब सुनकर माँ को इतनी प्रसन्नता होगी, इतनी कि उसे छाती से लगाये बिना न रहेंगी। माँ के इस स्वर

से थोड़ी देर के लिए वह वैसा ही खड़ा रह गया।

हल्ली का पक्ष लेकर अजीत ने दृढ़ता से कहा—त्रास किसलिए देती हो लड़के को? उसने ऐसी क्या बात कही जो इतना बिगड़ती हो? इसी तरह ताड़ना कर करके तो एक बार उसे भगा दिया था, और—

जमना ने कहा—फिर भागना हो तो भाग जाय। मैं समझ लूँगी, जब तक हमारा था, हमारे साथ रहा, आगे उसका भाग। पर मैं यह पसन्द नहीं करती कि अभी से वह दूसरों के लिए बुरी बातें कहना सीखे। मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, ऐसी बातें सिखाकर अभी से उसे बिगाड़ न दो।

"मैंने उसे सिखाया है!"

"तुमने नहीं सिखाया, पर तुम और किसी मतलब से उसे बढ़ावा क्यों देते हो? तुम्हें जो कहना हो सीधे मुझसे कहो। कहो मुझसे—चाहते क्या हो—लड़कों के मुँह से ऐसी वैसी बातें कहलाकर उनका मन खराब करना अच्छा नहीं है।"

अजीत ने समझौते के स्वर में कहा—इसमें लड़के के मन खराब करने की क्या बात हुई जमना। लड़के हैं, बीस तरह की बातें उनके कान पड़ती हैं। उन्हें सन्दूक में बन्द करके तो रक्खा नहीं जा सकता।

"नहीं रक्खा जा सकता तो ऐसी बातें भी लड़कों के मुँह से नहीं कहलाई जाती हैं। न जानें किसका क्या बुरा हो जाय।"

"तुम्हारी सब बातें ऐसी ही उलटी होती हैं। कहीं किसीके कहने से किसीका बुरा होता है? ऐसा होने लगे तो संसार में हैजा, महामारी की जरूरत न रहे। जमराज को कुछ न करना-

धरना पड़े और—"

"मैं तुमसे बात नहीं बढ़ाती। तुमने मेरा जैसा उपकार किया है, उसे मैं भूली नहीं हूँ। मैं तुम्हारे अधीन हूँ। मुझे काटना हो, कूटना हो, जो करना हो, मैं कुछ नहीं कहूँगी। मेरा हाथ जोड़कर तुमसे यही कहना है कि किसीका बुरा न सोचो। दूसरे किसीने तुम्हारा लिया क्या है।"

और कुछ न कहकर वह चुपचाप वहाँ से उठ गई।

(२३)

हीरालाल ने दूसरे लड़कों के सामने मान लिया कि जिस प्रकार हल्ली जगदम्बा का मेला देख आया है, उस तरह वह नहीं देख सका था। न तो वहाँ उसने रास-लीला वालों को देखा था और न हिंडोला वालों को। भीड़ भी इस बार जैसी सुनी जाती है, वैसी उस बार न थी। इस खरेपन से उसके साथ हल्ली का प्रेम बढ़ गया। यहाँ तक कि एक दिन उसने अपना वह सचित्र सूचीपत्र भी कुछ दिन के लिए उसे दे डालना चाहा। परन्तु हीरालाल ने उत्तर दिया कि यहीं रहने दो, जब तारीख देखनी होगी, यहीं देख जाया करूँगा।

उस दिन हल्ली से मिलने के लिए आकर उसने देखा कि घर के भीतर न तो जमना है और न आस-पास कहीं हल्ली ही दिखाई देता है। कहीं खेलने के लिए निकल गया होगा, यह सोचकर वह लौटने ही वाला था कि उसे डाकिया आता दिखाई दिया। वह वहीं खड़ा हो गया।

डाकिये को रुकते देखकर उसने पूछा—क्या जमना काकी

की कोई चिट्ठी है ? वे काम से गई हैं; लाओ, मैं दे आऊँ।

"देखो खो न जाय लल्लू, उन्हें दे देना।"—कहकर उसने एक लिफाफा उसके हाथ पर रख दिया।

उसे लेकर हीरालाल ने देखा, कि साधारण आदमी के हाथ का लिखा है। उस लिखावट से बुरे अक्षर वह स्वयं बना लेता है! इसे पूरा पढ़ लेने में उसके लिए विशेष गौरव न था। पर उस पर भेजने वाले का नाम वृन्दावन देखकर वह चौंका। अरे यह पत्र तो हल्ली के बाप का है!

पत्र लेकर वह एकान्त में भाग गया। खोलकर उसने उसे पढ़ा। दूर के किसी अस्पताल से उसमें जमना के लिए लिखा था—

"बरसों बाद लिख रहा हूँ, क्षमा करना। मन शान्त न था। आज किसी तरह जी कड़ा करके लिखने बैठा हूँ। मालूम नहीं, यह पत्र तुम्हें मिलेगा भी या नहीं। तुम कहाँ हो, बच्चा कहाँ है, किस तरह हो, क्या करती हो, यह मैं कुछ नहीं जानता। फिर भी लिख रहा हूँ। जैसी रामलला की इच्छा।

द्वारका जी की यात्रा से लौटकर मैं अचानक बीमार पड़ गया था। सोचा था, इसी अस्पताल में सब समाप्त हो जायगा, किसीको पता तक न पड़ेगा। परन्तु रामलला की दया से अब उठकर चलने लगा हूँ। पत्र पाते ही दस रुपये भेज सको तो भेज देना। एक बार जनमभूमि और तुम सबको देखने की लौ लगी है। शेष सब वहीं आकर कहूँगा। रामलला चाहेंगे तो सब सुन कर तुम क्षमा कर दोगी।"

नीचे अस्पताल की कोठरी आदि का पता दिया हुआ था।

हीरालाल ने पत्र देने के कई उपाय सोचे। पहले सोचा—जमना काकी को दूँगा, जिस समय हल्ली मौजूद न हो। वे तो

पढ़ सकती नहीं, मुझीसे पढ़ने के लिए कहेंगी। मैं कुछ का कुछ पढ़ूँगा। कहूँगा, नोटिसनामा है; किसीसे तुमने एक हजार रुपये लिये थे, उसीका। नहीं, यह नहीं। कह दूँगा, तुम्हारे मायके का है; जो छोटे मामा इस बार आये थे, उनके मर जाने का समाचार है। खिजा-खिजाकर रुला दूँगा। कहीं बीच में ही हली आ टपका तो? पत्र लेकर मैं भाग जाऊँगा, उसे देखने न दूँगा। और, अजीत आ गया तब?—अजीत का ध्यान आते ही हीरालाल की आकृति बदली। उसके व्यवहार से वह असन्तुष्ट था। उसने कहा—कैसा दुष्ट है वह! मेरी ओर इस तरह ताकता है, जैसे खा जाना चाहता हो। हली ने मेरे ही ऊपर ढेला चलाया और मेरे ही ऊपर नाराजी! वह ऐसा खराब आदमी है कि हली और हली की माँ उसीकी बात मानकर चलते हैं। पता नहीं लगने पाता कि भीतर क्या गड़बड़ है। उस दिन हली की माँ ने उसके पैर छुए थे। साधू-सन्त बनता है! देखूँगा।

तत्काल उसे ध्यान आया कि हली ने अपनी माँ के नाम से झूठा पत्र लिखकर सूचीपत्र मँगाया था। वह क्यों न ऊपर का ऊपर इसी तरह उत्तर लिख दे।

उसे उसी दिन अपने पिता के साथ एक जगह नातेदारी में जाना था। घर के कागजों के एक बस्ते में से चुपके चुपके वह एक सादा लिफाफा उठा लाया और झट से उसने जमना की ओर से वृन्दावन को इस आशय का पत्र लिख डाला—

"हली बहुत दिन हुए मर गया। तुम भी मेरे लिए मर चुके हो। मैंने अजीत के साथ घर बसा लिया है। अब यहाँ तुम्हारे आने की जरूरत नहीं रही। रुपये भीख माँगने से बहुत मिल जायँगे। मैं अच्छी तरह हूँ। तुम्हारी राजी खुशी भगवान से

चाहती हूँ।"

लिफाफा डाकखाने के बम्बे छोड़कर ज्यों ही वह घर लौटा, त्यों ही बाहर जाने के लिए उसे गाड़ी तैयार मिली। किसी मित्र से अपनी कारिस्तानी की बात कहने के लिए उसका जी छटपटाया, पर समय न था। बाप के साथ उसे तुरन्त रवाना हो जाना पड़ा।

वृन्दावन का पत्र उसकी जेब में था, अचानक वह उसके पिता ने देख लिया।

(२४)

कई दिन से जमना उस वचन के सम्बन्ध में सोच रही है, जो उस रात उसने अजीत को दिया था। आज अवसर देखकर उसने कहा—मुझे तुमसे कुछ कहना है।

अजीत बोला—वही मैं कहना चाहता था। मोतीलाल चौधरी अब कुछ करेगा। कई दिन से मैं यही सोच रहा हूँ कि कोई अच्छी सूरत निकल आवे। बस तुम जी कड़ा करलो तो काम बन जायगा।

जमना निश्चय न कर सकी, ऐसे में अपनी बात कैसे कहे। उसने बहुत विचार किया है, विचार करने के बाद समय के लिए प्रतीक्षा भी कम नहीं की, तब कहीं इतना वह आज कह सकी। उसके मन में द्वन्द्व था। जितना वह अपनी बात कहना चाहती थी, उतना नहीं भी कहना चाहती थी। अष्टमी की रात में प्रकाश और अन्धकार की तरह, इस 'हाँ' और 'न' का प्रभाव उसके भीतर एक-सा था। समझना आसान न था कि प्रमुखता 'हाँ'

की थी या 'न' की, अष्टमी शुक्ल पक्ष की थी या कृष्ण पक्ष की।

अजीत उठ खड़ा हुआ। जमना ने कहा—बैठो, मुझे बात करनी है।

बात करनी है, परन्तु की नहीं जाती। बात के ऊपर कोई पत्थर पड़ा है, जो उसके प्रवाह को नहीं बहने देता।

चलने के लिए उद्यत अजीत ने थमकर कहा—इस समय मैं जल्दी में हूँ। फिर आऊँगा। मोतीलाल से मिलकर खुद तय कर लूँगा कि क्या करना चाहिए।

कहकर वह जाने के लिए बढ़ा।

जमना सामने रास्ता रोककर खड़ी हो गई। बोली—दूसरी बात है, बैठ जाओ।

अजीत के शरीर से उसकी धोती का छोर छू गया। सहसा उसके रोम रोम में उस वस्त्र की सिहरन जा पहुँची। यह क्या हुआ? जैसे वह अवश हो गया हो। इधर वह जो कुछ निश्चय कर चुका था उस पर अब और दृढ़ रहने की शक्ति उसमें नहीं है। जैसे पराजित होकर उसने कहा—कहो, क्या बात है।

जमना ने कहा—क्या बैठने के लिए समय नहीं है?

उसने बैठकर कहा—लो, बैठा हूँ। नाराज न हो।

"बात टालोगे तो नहीं?"

"नहीं टालूँगा।"

"नहीं टालोगे?"

"यह तो मैंने सोचा ही न था कि कहीं वह बात मेरे बस की न हुई तो?"

"ऐसी नहीं है। मुझे भरोसा है।"

"तब मैं बचन देता हूँ। तुम जो कहोगी, उससे पीछे मैं न हटूँगा। पर आज कुछ न कहो। मुझे अपना जी पक्का कर लेने दो।"

"डरो मत, तुम्हें धोखा न दूँगी।"

"फिर भी आज नहीं। न जानें मुझे क्यों डर लगता है! मुझे अपने पर भरोसा नहीं।"

बाहर से हल्ली ने आवज दी—माँ!

अजीत बोला—देखो, हल्ली मदरसे से आ गया। उसीका ध्यान मुझे था। वह लड़का है, पर आजकल के लड़के लड़के ही नहीं होते। वे बहुत बातें समझते हैं।

जमना गम्भीर हो गई!

कुछ देर बाद हल्ली ने आकर पूछा—माँ, अजीत काका आये थे?

अनमने जी से जमना ने कह दिया—हूँ।

"किसलिए आये थे?"—हल्ली ने पूछा। पर उत्तर की प्रतीक्षा न करके तुरन्त वह कुछ खोजने-सा लगा। एक जगह कपड़े की गेंद पड़ी थी, उसे उठाकर वह वहाँ से इस तरह निकल गया, जैसे भागना चाहता हो।

हल्ली का भाव देखकर जमना चौंकी। उसे स्पष्ट होने लगा कि कई दिन से हल्ली का रुख अजीत के प्रति बदला हुआ है।

रात को ब्यालू के समय आकर हल्ली ने पूछा—माँ, तुम्हारे पास कोई चिट्ठी आई है?

"मेरे पास किसकी चिट्ठी आयगी रे?"

"मैंने पूछा है, कहीं आ गई हो। तुम्हारा जी अच्छा

नहीं दिखाई देता।"

"चिट्ठी आती तो क्या मैं पढ़ सकती थी? पढ़कर सुनानी पड़ती तुझीको।"

"मैं यहाँ न होऊँ, हीरा हो;—उसीसे पढ़वाकर तो तुमने नहीं छिपा ली?—सच बताओ माँ, कोई चिट्ठी आई तो नहीं है?"

हल्ली की व्याकुलता देखकर जमना शंकित हो उठी। बोली—नहीं भैया, मेरे पास कोई चिट्ठी नहीं आई। आती तो तुझसे छिपाती किसलिए?

"कोई बुरी बात तुम मुझे न सुनाना चाहती हो। तुम्हें मेरी सौगन्ध माँ, जो तुम मुझसे छिपाओ। मैं रोऊँगा नहीं।"—कहते-कहते ऐसा जान पड़ा कि वह रो पड़ना चाहता है।

"मैंने कोई चिट्ठी नहीं छिपाई है। बुरी बात कैसी रे!"

"यही बप्पा के बारे में कोई बुरी खबर हो और तुम चाहती हो, मैं न सुनूँ।"

"मेरे पास चिट्ठी आई है!—कहा तुझसे किसने?"

जमना का यथार्थ विस्मय देखकर हल्ली निश्चिन्त हो गया। उसने प्रसन्नता की साँस लेकर कहा—तब झूठ है! राधे ने मुझे डरा दिया था। वही मैं सोचता था कि वैसी कोई बात होती तो तुम मुझसे जरूर कहतीं।

लड़के कभी कभी हल्ली को उसके बाप के न आने की बातें बना-बनाकर चिढ़ाया करते हैं, यह सोच कर जमना भी निश्चिन्त हो गई। वह किसी जल्दी में थी। और कुछ न पूछ कर उसने झट-से लड़के के आगे थाली परोस दी।

दूसरे दिन हल्ली ने राधे से सुना कि नेवता करके हीरा

लौट आया है। इस पर उसने कहा—लौट आया है तो मुझसे क्यों नहीं मिला ?

राधे बोला—उसे अपनी लंबरदारी का घमण्ड है। अच्छी बात है जो वह यहाँ नहीं आया। जब आता है, तब मुझे यही डर लगा रहता है कि कोई चीज पार न कर दे।

थोड़ी देर बाद खेल के मैदान में उसे हीरा दिखाई दिया। परन्तु उसने हल्ली की ओर देखा तक नहीं।

हल्ली ने आगे बढ़कर पूछा—बहुत दिन लगा दिये,—कब आये हीरे ?

"कल"—कहकर वह आगे बढ़ा। हल्ली को अपने साथ चलते देखकर उसने फिर कहा—मेरे काका नाराज होते हैं।

किस बात पर,—खेलने पर ? तो आओ, मेरे घर चलो। वहीं अकेले में साथ बैठ कर दोनों पढ़ेंगे। मैं भूगोल सीखूँगा, तुम हिसाब सीखना।"

हीरालाल बोला—बड़ी भूगोल में एक जगह का पता मुझे भी देखना है। वहाँ अस्पताल है।

"अस्पताल तो भूगोल में नहीं लिखे। नकशे में रेल की लकीर तो बनी है, वही दाँतुएदार;—अस्पताल भी होने चाहिए थे।"

राधे ने बीच में कहा—और वह चिट्ठी ?

हीरा ने तेजी से उसकी ओर मुड़कर कहा—कैसी चिट्ठी ? मैं नहीं जानता। मेरे काका के पास आई होगी। मैं क्या जानूँ। घर की बातें जिस तिससे नहीं कही जातीं।

राधे ने उत्तर दिया—तुम्हारे घर की बात में क्या हमें आग लगानी है। हम तो चिट्ठी की कह रहे थे।

हीरा बिगड़कर कर बोला—सुनी हल्ली, तुमने इसकी बात? तभी तो ऐसे खराब लड़कों के साथ खेलने के लिए मेरे काका मना करते हैं।

राधे ने कहा—और तुम बड़े साहूकार के बेटा हो! चलो हल्ली, हम अलग खेलें।

हल्ली को राधे का व्यवहार अच्छा नहीं लग रहा था। उसने कहा—राधे को चिट्ठी की बात से जलन हो रही है।

हीरा आगे बढ़ते-बढ़ते रुक गया। उत्सुक होकर उसने पूछा—कैसी चिट्ठी?

"कहता था कि माँ के पास कोई चिट्ठी आई है। उन्होंने वह मुझे न दिखाकर तुमसे पढ़वाकर सुनी। तुम तो बाहर थे, फिर यहाँ तुम कैसे आगये, एक दम सब झूठ है।"

ताली पीटकर हीरा बोला—झूठ नहीं, सब ठीक है। जादू के जोर से दूसरे की चिट्ठी मेरे हाथ में आजाती है, जादू के जोर से मैं सब कुछ कर सकता हूँ!

सब लड़के खिलखिलाकर हँस पड़े।

राधे ने लजाकर कहा—मैंने वैसी बात सुनी थी, झूठ होगी।

हल्ली बोला—मैं बताऊँ राधे, तुमने झूठ नहीं सुना। जगदम्बा के मेले में से मैंने एक चिट्ठी घर के लिए लिखी थी। जब मैं लौटकर यहाँ आ गया, उसके दूसरे दिन वह चिट्ठी यहाँ आई थी। वही चिट्ठी लेकर हीरा माँ को सुनाने गया था कि हल्ली की चिट्ठी आई है; वह जल्द आने वाला है, तुम कोई चिन्ता न करो! गया था न?—न कुछ बात के लिए हम आपस में सिर फोड़ रहे थे।

सन्तुष्ट होकर सब मैदान की ओर बढ़ गये।

(२५)

राधे ने आकर हल्ली से कहा—तुम मुझे झुठला रहे थे, मेरी बात सच है।

उसने पूछा—कौन बात,—चिट्ठी वाली? माँ के पास चिट्ठी आई है?

"आई है।"

कहीं कुछ माँ के प्रति हल्ली का सन्देह बढ़ रहा था। इसलिए वह जोर देकर नहीं कह सका कि मैं पूछ चुका हूँ, ऐसा नहीं हो सकता। उसने कहा—तब मालूम कैसे हो? अजीत काका को पता होगा।

"उन्हें पता है, पर वे तुम्हें बतायँगे नहीं।"

हल्ली उद्विग्न हो उठा। उसे याद आया अभी कुछ देर पहले वह कहीं जा रहा था, तब एक आदमी ने उसे पुकारकर पूछा—तुम्हारे बप्पा की कोई खबर आई है? उस समय इस पर कुछ ध्यान न देकर सिर हिलाता हुआ वह आगे बढ़ गया था। अब उसने सोचा, चिट्ठी आई जरूर है। बात उठ रही है तब झूठ कैसे होगी?

राधे ने कहा—हीरा को भी पता है।

उस आदमी को पता है, अजीत को पता है, और हीरा को भी पता है; है नहीं केवल हल्ली को। यह तो बहुत बड़ी लज्जा की बात है! उसने सिर हिलाकर कहा—हीरा बदमाश है, उसकी बात का क्या ठिकाना। वह बकता ही रहता है।

राधे ने समर्थन किया—उसकी बात का तो ठीक-ठिकाना

नहीं है। वह कह रहा था, हल्ली का खेत, आम का पेड़ और घर-वार सब नीलाम कराके मैं उसे गाँव से निकलवा दूँगा। उस पर मेरे बहुत-से रुपये आते हैं। उसके बाप की चिट्ठी आई है, वह मर गया है। अब हमारे काका मानेंगे नहीं। हम सबने पूछा—'वे मर गये हैं, फिर उन्होंने चिट्ठी कैसे लिखी?' तब उठ कर वह चल दिया, चल न देता तो हम पीटे विना न रहते। कहता था, हमारे काका ने खराब लड़कों से बात करने के लिए मना कर दिया है!

हल्ली ने कहा—अजीत काका से जाकर पूछूँ।

"तुम मूर्ख हो, जो ऐसा कहते हो"—राधे ने उत्तर दिया।

ऋण का प्रसङ्ग उठने पर हल्ली लज्जित हो उठता था। इसलिए अब हीरालाल की चर्चा दबा देने के लिए ही उसने वैसी बात कही थी। परन्तु कहने के साथ ही उसने भी अनुभव किया था कि इससे काम न चलेगा। वह चुप रह गया। राधे ने फिर कहा—कोई कुछ कहे, मुझसे पूछ लो, तुम्हारे बप्पा मर गये हैं।

हल्ली घुड़ककर बोला—मर क्यों गये हैं? जाओ अपने घर, मैं ऐसी बात नहीं सुनता!

राधे हँस पड़ा। बोला—बाप सबके मरते हैं, इसमें बुरा मानने की क्या बात? देखो, एक बात मेरी सुनो। अजीत को अपने घर की देहली के भीतर न घुसने दो। वह खराब आदमी है।

"खराब कैसा?"

"उसने तुम्हारी माँ पर जादू कर दिया है। ऐसा काम और कोई नहीं कर सका।"

"मेरी माँ पर जादू कोई नहीं कर सकता। हमारे घर भूत भी नहीं आ सकता। वे अच्छी तरह रहती हैं। कभी कोई बुरा काम नहीं करतीं।"—हल्ली ने गर्व से कहा।

राधे ने हल्ली के कान के पास मुहँ लगाकर चुपके से कहा—बुरा न मानो तो कहूँ।

"कहो।"

"तुम्हारी माँ बुरा काम करने जा रही हैं, बहुत बुरा। इसी अजीत के"—

राधे पूरी बात नहीं कर पाया और हल्ली ने धक्का देकर उसे दरवाज़े के बाहर ढकेल दिया। वह चिल्लाया—देखो काकी, हल्ली मुझे मारता है।

भीतर से जमना ने कहा—क्या ऊधम करता है रे हल्ली? आई, मैं देखती हूँ।

राधे भाग गया। उसे डर लगा कि कहीं हल्ली उसीके मुहँ पर मेरी बात न खोल दे।

हल्ली चुपचाप बैठकर विचार में डूब गया। क्या सचमुच बप्पा मर गये? माँ मेरा रोना-पीटना बचाने के लिए बात छिपातीं, तब भी लुक छिपकर तो वे रोतीं। अपने लौटने के बाद मैंने तो उन्हें प्रसन्न ही देखा है।

"नहीं, वे नहीं मरे!"—हल्ली के मुहँ से यह बात इस तरह निकल पड़ी, जैसे वाद-विवाद में वह किसीको उत्तर दे रहा हो। उसके मन में आया कि वे मर गये होते तो मेरा जी बेचैन हो उठता और माँ भी अपने आप उदास पड़ जातीं। एक दिन की बात उसे याद आई। उसे खेल खेल में कड़ी चोट लग गई थी। उसी समय उसकी माँ का जी न जानें कैसा कैसा करने

लगा था। उसकी माँ ने स्वयं यह बात उससे कही थी। दीपा की माँ ने भी बताया था कि उसे भी ऐसा होता है। माँ चुपके-चुपके रो लेतीं पर चूड़ियाँ तो उनके हाथ में हैं। ऐसे में चूड़ियाँ फोड़े बिना नहीं चलता। न फोड़ो तो अपने आप फूटकर वे छाती में गड़ जाती हैं!—नहीं अब मैं राधे की बातों में न पड़ूँगा।

उठकर वह बाहर घूमने के लिए चल दिया। बाहर की हवा लगते ही उसकी उदासी दूर हो गई। उसने सोचा—मैं स्वयं हीरा से अच्छी तरह पूछूँगा तो वह सही सही सब बता देगा।

मैदान में जी भर खेल खेलके साँझ के झुटपुटे में वह राधे के साथ लौटा आ रहा था। बीच गली में एक जगह उसे किसी चीज की अच्छी तरह बँधी हुई एक पुड़िया पड़ी दिखाई दी। उसने कहा—किसी गैलहारे के हाथ से मूँगफली की पुड़िया छूट गई। बाजार से खरीदकर घर लिये जा रहा होगा।

राधे ने कहा—नहीं, तमाखू होगी। ऐसी पुड़िया तमाखू की होती है।

हली ने आगे बढ़कर झट-से उसे उठा लिया। पुड़िया बजनदार थी। बोला मालूम नहीं किसकी है।

"लाओ, खोलकर देखलूँ"—कहकर राधे ने हाथ बढ़ाया।

हली खोलकर देखने के लिए इधर-उधर कर रहा था, परन्तु राधे के हाथ में खोलने का जस न पड़ जाय, इसलिए अब वह उसे स्वयं खोलने लगा। राधे सिर झुकाकर उससे सटा हुआ परिणाम की प्रतीक्षा कर रहा था।

"किसीने हँसी की है"—कहकर हली ने पुड़िया दूर फेक

दी। उसमें मिट्टी और ककड़ों का चूरा था, वह हवा में उड़ता हुआ, इधर-उधर फैल गया। हल्ली ने उसे खोला था, इसलिए वह लज्जित हुआ, पर राधे जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ा। उसने सोचा—अच्छा हुआ जो हाथ नहीं लगाया!

दो तीन लड़के एक ओर से दौड़कर वहाँ आ खड़े हुए। उनमें से हीरा ने कहा—मेरी मूँगफली की पुड़िया यहाँ छूट गई थी। बताओ, कितने चट कर डाली? मैं दाम लूँगा।

दूसरे लड़के जोर जोर से हँसने लगे। एक ने कहा—मूँगफली नहीं, तमाखू थी। हल्ली तमाखू पीता है। मैं पंडितजी से कहूँगा।

हल्ली थोड़ी देर पहले निश्चय कर चुका था कि चिट्ठी की बात निकालने के लिए वह हीरा से मेल कर लेगा, परन्तु इस समय उसे रोष आया। उसने कहा—तुम बहुत ओछे आदमी हो।

"ओछे आदमी तुम हो या मैं? दूसरे की चीज उठा लेते हो,—यह चोरी है। मैं तुम्हें थाने में बन्द करा दूँगा।"

"थाने में बन्द कराने वाले मर गये!"—कहकर हल्ली आगे बढ़ा। हीरा भी उसके पीछे लग गया। उसने कहा—तुम मेरे पीछे क्यों आते हो?

"मेरी खुशी। तुम किसीको चलने से नहीं रोक सकते।"

"अच्छा जाओ"—कहकर हल्ली खड़ा हो गया।

"मैं भी नहीं जाता, तुम हुकुम देने वाले कौन?"

हल्ली के फिर चलने पर हीरा फिर चलने लगा। बोला—चलो घर, मैं जमना काकी से तुम्हें पिटवाऊँगा।

हल्ली मुड़ पड़ा। बोला—चलो राधे, हम लोग महन्त की बावड़ी में नहाने चलें। रात में वहाँ डेढ़ डेढ़ हाथ के दाँतों वाले

भूत रहते हैं। देखें, कौन वहाँ मेरे साथ चलता है। देखो, वहाँ अँधेरे में वह एक भूत मुहँ बाये खड़ा है।

हल्ली की विकट भूत-भङ्गी देखकर दूसरे लड़के "मैयारी,—खा डाला!"—कहकर भागे। हीरा ने कहा—मैं ओछे लड़कों के साथ नहीं जाता।

(२६)

जमना ने कहा—हल्ली, जरा अपने काका को तो बुला ला।

हल्ली समझ गया, अजीत काका के लिए कह रही हैं। परन्तु उसने पूछा—मोहन काका को?

"उन्हें नहीं, अरे अपने काका को।"

"तुम अजीत काका के लिए कह रही हो। अभी मुझे हिसाब लगाना है, लगाकर न ले जाऊँगा तो पंडितजी मारेंगे। थोड़ी देर में जाऊँगा।"

"घण्टे भर से तो धमाचौकड़ी मचा रहा है। अभी जा। जाता है या नहीं?"

हल्ली ने माँ के मुख की ओर देखा। जल छिड़ककर बुझाई गई आग के बीच में रोष की एक चिनगारी जैसे वहाँ चमक उठी थी। चमक कर वह तत्काल बुझ गई। माँ की व्याकुल आकृति देखकर हल्ली चिन्तित हो उठा। एकाएक उसने असङ्गत-सा प्रश्न किया—तुम तो कहती थीं, बप्पा की चिट्ठी नहीं आई?

दूसरा समय होता तो ऐसे अविश्वास के लिए वह उसे झिड़क देती। परन्तु इस समय वह ऐसा नहीं कर सकी। उसने

कहा—मेरे पास नहीं आई है रे ! आती तो तुझे न दिखाती ? सुनती हूँ और कहीं आई है ।

"हीरा के पास आई है ? झूठी बात !"—हल्ली ने तत्काल कहा । हीरा के पास चिट्ठी आने की बात जब स्वयं उसके भीतर उठती है तब तो वह उसे मान लेता है, किन्तु दूसरे के मुहँ से वैसा आभास पा कर उसकी इच्छा विरोध करने की होती है !

रुककर हल्ली ने फिर कहा—हीरा के पास बप्पा की चिट्ठी आने का क्या काम ? आती तो मेरे पास आती । हाँ, आई हो तो अजीत काका के पास आई हो । मैंने उनसे पूछा था । कहने लगे—तुम्हें इन बातों से क्या, तुम तो खाओ-पिओ, खेलो-कूदो और पढ़ो-लिखो । जो कुछ करने का होगा, हम सब कर लेंगे । जान पड़ता है, जान बूझकर उन्होंने बात छिपा ली है ।

"हीरालाल मदरसे में तो मिलता होगा तुझे ?"

"कई दिन से वह पढ़ने नहीं आता । पण्डितजी ने पीट दिया था । वह पिटे नहीं तो क्या हो । न खुद पढ़ता है, न दूसरे को पढ़ने देता है । बराबर बातें मारता रहता है ।"

जमना ने कहा—वह मेरे पास आवे तो मैं उससे पूछूँ ।

"वह अपने बाप की तो मानता नहीं, तुम्हारी क्या मानेगा ? मुझे सुना सुनाकर वह अपने साथियों से इस तरह कहता है कि उसके पास चिट्ठी आई है और उसने जवाब भी लिख दिया है । मैं सोचता हूँ, अजीत काका के पास चिट्ठी आने की खबर सुनकर उसने यह बात खड़ी कर दी है । राधे भी कहता है, अजीत काका के पास चिट्ठी आई है ।"

जमना ने कहा—नहीं उनके पास नहीं आई है, तू उन्हें बुला ला ।

अजीत के प्रति माँ का यह विश्वास हल्ली को बुरा मालूम हुआ। बोला—तुम उनका बहुत भरोसा करती हो, यह अच्छी बात नहीं है। राधे कहता है, हमारे बप्पा ने उन्हें किसी बात के लिए नोटिस दिया है। इसीसे वे उस बात को छिपा गये हैं। एक दिन सच्ची बात अपने आप खुल पड़ेगी।

जमना ने कठोर पड़कर कहा—तू नहीं जानता। मैं कहती हूँ, जा!

हल्ली चला गया।

जमना ने सुना था कि उसके पति की बीमारी की खबर कहीं से आई है। बीमारी की ही खबर सुन कर एक क्षण के लिए उसके भीतर आनन्द की बिजली-सी दौड़ गई थी। बीमार ही सही, जीवित तो हैं! उसके बाद तत्काल वह विचलित हो उठी। न जानें कहाँ कैसी हालत में पड़े हैं। न जानें कितना और कैसा कष्ट उन्हें है। कोई दवा देने वाला, पानी पिलाने वाला, पंखा करने वाला भी वहाँ है या नहीं? अरे इस सबका पता कैसे लगे? सीधी खबर उसके पास भी तो आ सकती थी। जानें कितना समय हो गया है, जबसे कुछ सुनने के लिए वह अपने दोनों कान खोले बैठी है, जब से वह अपनी दोनों आँखें पथ पर बिछाये बैठी है। दिन आये और चले गये, रातें आईं और गत हो गईं। सप्ताह, पखवारे, महीने और संवत् एक एक करके न जानें कितने फेरे कर चुके। सब कुछ हुआ, सोते में और जागते में, सुख में और दुख में, उसने अपनी एक आशा का परित्याग नहीं किया है। एक आशा उसके भीतर जागती ही रही है। यह अवश्य था, ऊपर राख की एक परत दिखाई देती थी। ऐसे में कभी कहीं धोका हो जाना असम्भव न था। परन्तु

आज सहसा उसके ऊपर हाथ पड़ जाने से मालूम हुआ कि इस राख में भी कम उष्णता न थी। इसके भीतर प्रधान वस्तु और भी सुरक्षित होकर धधक रही है।

उसके पति का सच्चा समाचार आ गया है, बहुत निकट आ गया है, इतने निकट कि आँखें उसे देख सकती हैं। परन्तु समाचार तो आँखों से देखा नहीं जाता। वह कान की वस्तु है! उसके कान उसे सुन क्यों नहीं सके? उसने शक्ति भर तो ऐसा कुछ होने नहीं दिया, जिससे उसे इतना बड़ा दण्ड सहना पड़ता। जो कुछ उससे हो भी गया है उसके लिए उसका हृदय कातर होकर पुकार करने लगा—हे मेरे भगवान, वह सब क्या मैंने अपने आपे में रहकर किया था? क्या तुम जानते नहीं हो, उस दिन मैं अपने आप न जानें कहाँ खो गई थी। मेरे मुँह से उस दिन न जानें किसने क्या कहला लिया था। अरे मेरी रक्षा करो, तुम मेरी रक्षा करो!

ऐसा हुआ क्यों? उसका तो विश्वास था कि जब उसके ग्रह फिरेंगे तब उसका पति सीधा उसीके पास आ पहुँचेगा। सीधा उसके पास आकर वह उसे चौंकाता हुआ सोते से एक दम जगा देगा—कहो, अच्छी तो हो! ऐसा ही होगा, इसके विरुद्ध नहीं हो सकता अरे आज यह क्या हुआ? उनके लिए इस गाँव में कोई दूसरा मुझसे बढ़कर उनका अपना है! क्या मैं ऐसी ही अविश्वासिनी हूँ कि वे इस गाँव में किसी दूसरे को अपने दुख-दर्द का साथी मुझसे भी अधिक समझते? हे मेरे राम, यह क्या हुआ? मेरे दोष के लिए किसी दूसरे को दुख न दो। न जानें इस समय उनके ऊपर क्या बीत रही है? सुनो, तुम मेरी सुनो!

उसकी आँखों में रह रहकर आँसुओं का बाँध टूटने लगा।

कितना समय बीत गया, यह उसे मालूम नहीं हुआ। हल्ली के आने से वह चौंक पड़ी। उसने बताया अजीत काका किसी काम से कहीं जल्दी जल्दी चले गये हैं। कहा—फिर आयँगे, अभी एक जरूरी काम है।

जमना ने अजीत को यह पता लगाने के लिए बुलाया था कि बीमारी की यह खबर कैसी उड़ रही है। क्या मोतीलाल चौधरी के पास खबर आई है? हो सकता है सदर में जगराम के पास आई हो। जैसे लगे, वहीं इसका पता लगावें। जमना के तो जैसे हाथ-पैर ही ढीले पड़ गये हैं। वह निश्चय न कर सकी कि वह क्या करे।

(२७)

अजीत डाकघर की ओर बढ़ा जा रहा था, बीच में ही उसे एक डाकिया मिल गया। उसे रोक कर उसने कहा—सुनो तो जरा। तुमसे कुछ पूछना है।

डाकिया ठहर कर इतने निकट आ गया कि जैसे फुसफुसाहट कान में सुनने को तैयार हो। अजीत ने धीमे स्वर में कहा—जमना की कोई चिट्ठी हाल में आई थी?

"आई होगी। अच्छा?"

"अच्छा क्या। वह उन्हें न देकर तुमने गलती से और किसीको दे दी है।"

"पर दूसरे की चिट्ठी को बात माते, मैं तुम्हें किस तरह बतलाऊँ? हमारे यहाँ ऐसा रूल नहीं है। पोस्टल गाईड में लिखा है"—

"कुछ लिखा हो, पर तुम किसीकी चिट्ठी किसीको नहीं दे सकते। जमना को मालूम हो गया है। वे इसकी सिकायत करने कलट्टर साहब के बंगले पर जाने की तैयारी कर रही थीं। मैंने उन्हें रोक दिया। कहा—वे लोग अपने ही मिलने-जुलने वाले हैं। किसीकी रोजी मारी जाय ऐसा करना ठीक नहीं। अच्छा, तो किसी दूसरे को उनकी चिट्ठी गलती से दे दी तो वह उससे लौटाकर हमें दे दो। किसीकी सिकायत का मौका न आवे, मैं यही चाहता हूँ। मैं जमना को रोक आया।

डाकिये ने कहा—उन्हें शिकायत के लिए जाना हो तो कलट्टर साहब नहीं, लाट साहब के यहाँ चली जाँय। इसका डर हमें नहीं है। पर उनकी चिट्ठी की बात हम तुम्हें कैसे बता दें? यह बात रूल के खिलाफ पड़ती है।

"और यह बात भी तो खिलाफ पड़ती है कि तुम जमना के नाम की चिट्ठी मोतीलाल चौधरी के लड़के के हाथ में दे दो।"

डाकिये ने मुसकरा कर कहा—माते, जमना की चिट्ठी की बात अभी तुम्हें नहीं बताई जा सकती। अभी तुमने बिरादरी को खिलाया-पिलाया नहीं है, मेरा मुहँ मीठा नहीं किया, और दूसरे राह-रस्म अभी कुछ नहीं हुए। तुम्हीं बताओ, अभी हम यह सब कैसे कर सकते हैं? जिस दिन यह सब हो जायगा, उस दिन तो फिर तुम्हीं मालिक हो!

अजीत ने असन्तुष्ट होकर कहा—तुम वाहियात बातें करते हो। अच्छा, देखा जायगा।

कहकर वह आगे बढ़ गया।

डाकिये ने अजीत को लौटाकर कहा—देखो, माते नाराज न हो। सच्ची बात मैं तुम्हें बताये देता हूँ। मेरी ड्यूटी आज

कल महीनों से देहात की है। गाँव का काम रामसिंह करता है। पर मुझे मालूम है कि जमना की एक चिट्ठी आई थी। डाक सार्ट करते समय मैंने नाम सुना था। पन्द्रह बीस दिन हुए होंगे। हाँ इतने ही—

"ठीक है। इतनी ही पुरानी बात है।"—अजीत ने कहा। उसने यह प्रकट नहीं होने दिया कि वह इस बारे में स्वयं कुछ नहीं जानता।

डाकिये ने आगे कहा—वह चिट्ठी रामसिंह ने मोतीलाल चौधरी के लड़के को दे दी,—वही लड़का जो मदरसे में जमना के लड़के के साथ पढ़ता है। रामसिंह की ऐसी बहुत शिकायतें हैं। तुम जरूर उसकी शिकायत करा दो। पर कलक्टर के यहाँ इसकी शिकायत करने से कुछ फायदा नहीं है। तुम कहोगे तो मैं सब बता दूँगा, कहाँ को क्या लिखना चाहिए। रात को मिलना। अभी तो देहात जाना है। बारह-पन्द्रह मील का चक्कर कई गावों में लगाकर रात को ही लौट सकूँगा। ऐसी परेशानी है!

वह चला गया।

अजीत मोतीलाल चौधरी के यहाँ पहुँचा। चौधरी अपनी नई बनी बैठक में थे। बैठक में अभी तक चूने का पलस्तर नहीं हुआ था; दीवार में सामने की तरफ जो दो अलमारियाँ थीं, उनकी चौखट में किवाड़ भी अभी लगने को थे। पर कमरा नये ढंग का बनवाया था, इसलिए उन्होंने अपनी बैठक अभी से यहीं जमा ली थी। एक पुरानी दरी पर, जिसमें जगह जगह स्याही के धब्बे थे, ऊपर की ओर गद्दी-तकिया के पास बहियों का बस्ता खोलकर चौधरी उसके कुछ कागज-पुरजे उलट-पुलट कर रहे थे। अजीत को देखकर बहियों और कागज-पुरजों के

बस्ते को कपड़े से ढँकते हुए उन्होंने कहा—आओ माते, आओ। आज कैसे इधर भूल पड़े ?

अजीत ने राम राम करके कहा—चला आया हूँ, कुछ ऐसा ही—

कुछ ठहर कर अजीत ने पूछा—लल्लू कहाँ हैं चौधरी ?

चौधरी के मुहँ पर अप्रसन्नता झलक उठी। उन्होंने कहा—अभी बाहर गया है। क्यों उससे क्या काम है ? मुझसे पूछो, जो पूछना हो।

"यों ही।—चौधरी, तुम तो लल्लू को शहर पढ़ने को भेज दो। थोड़ी-सी ही इँगरेजी पढ़ जायँगे तो तहसीलदार बने बनाये हैं। पढ़ना-लिखना हाकिम लोग नहीं देखते। आदमी खानदानी हो, बस फिर जगह मिलते देर नहीं लगती। भगवान की दया से पढ़ाने के लिए घर में लच्छमीजी की कमी नहीं है। ऐसे ही लोग नहीं पढ़ायेंगे तो कौन पढ़ायेगा। खानदानी आदमी नहीं पढ़ते इसीसे बड़े ओहदों के लिए साहबों को विलायत से नये साहब बुलाने पड़ते हैं। मैं कहता हूँ, लल्लू को जरूर पढ़ाओ। चौधरियों में से किसीको हाकिम होना चाहिए।

चौधरी की अप्रसन्नता दूर हुई। उन्होंने कहा—पढ़ाना तो मैं भी चाहता हूँ, पर डर है, शहर में जाकर बुरी सोहबत में न पड़ जाय।

"ऐसा नहीं हो सकता। महीने में पन्द्रह दिन तो तुम्हीं को अदालत के काम से शहर जाना पड़ता है। देख-भाल करते रहो तो कुछ खराबी नहीं आ सकती।"

चौधरी ने दूसरा सिलसिला छेड़ा—जमना क साथ तुम्हार घर बसाने की बात सुनी थी। उसमें क्या देरी हो रही है ? सुनो

माते, हमारी बात। ऐसी बातों में देर करने से पीछे हाथ मलना पड़ता है। कोई बीच में आकर गड़बड़ कर दे तो क्या नहीं कर सकता? जमना ही और किसी के कहे में आ सकती है। कल की बात कोई नहीं जानता। काल करे सो आज कर। और तुम हमारा झगड़ा भी साफ करवा दो। यहीं मामला निबट जायगा तो तुम्हारे खाने-पीने के लिए भी बहुत रहेगा और हमारा नुकसान न होगा। अदालत में जाने से दोनों ओर फजीहत होती है। अदालतें नाम की अदालतें हैं। वह तो पूरी दूकानदारी है। दो रुपये यहाँ धरो, चार वहाँ चढ़ाओ। बस यही वहाँ होता है।

अजीत ने कहा—हिसाब का पुरजा तो लगाकर बताओ। कब कितना दिया, कब कितना आया। ब्याज की दर क्या है, कितना ब्याज हुआ, सब ब्योरेवार मालूम तो हो। और जमना के साथ मेरे सम्बन्ध होने की बात गप है। जमना ऐसी नहीं है कि—

"खूब, मुझीसे उड़ते हो! बात आग होती है आग। वह छिपाये नहीं छिपती। तारीफ करूँगा तुम्हारी। कोई परिन्दा जहाँ पर नहीं उड़ा सका, वहीं तुमने घोंसला बना लिया। जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि। इसी तरह की बात हुई। बहुत अच्छा है। इसमें बुराई कुछ नहीं। कहो कैसी ताड़ी?"

अजीत ने कहा—वृथा बात करते हो चौधरी। मैं कहता हूँ, ऐसा कुछ नहीं है।

"ऐसी बात नहीं है तो गलती पर हो। यही मौका है कि कुछ कर लो। इस सम्बन्ध में जो मदद चाहो, मैं देने को तैयार हूँ। बस देरी न करो। हाँ, तुम्हें मेरा झगड़ा साफ कर देना पड़ेगा। बस, जल्दी करो!"

"इसलिए जल्दी करूँ कि वृन्दावन के जीते रहने की खबर

तुम्हें मिल गई है ? जल्दी से मैं तुम्हें जमना का खेत और कुआँ दिला दूँ, जिसमें बाद को वृन्दावन के आने पर कुछ करने-धरने को न रह जाय ? क्यों ?"

मोतीलाल सन्नाटे में आ गया। थोड़ी देर तक उसके मुहँ से कोई बात नहीं निकली। सूखी हँसी हँस कर उसने कहा—सब बेईमान नहीं होते माते। मैंने तो इसलिए कहा था कि तुम्हें भी फायदा हो और मेरा झंझट भी मिटे।

इसी समय भीतर से आकर हीरालाल ने कहा—काका, वह चीज सन्दूक में नहीं मिली। दादी ने अच्छी तरह देख ली है।

मोतीलाल को बुरा मालूम हुआ कि इसी समय यह क्यों आया। अभी वह अजीत से कह चुका था कि कहीं बाहर गया है। बोला—अच्छा जा!

अजीत ने हँसकर पूछा—लल्लू, एक बात मैं तुमसे पूछने आया हूँ।

अजीत को देखकर हीरालाल को गुस्सा आता था। परन्तु इस समय उसे प्रसन्नता हुई कि बहुत माते बना फिरता है, अब आज हमारे यहाँ आसामी की तरह आकर बैठना पड़ा। उसके कुछ कहने के पहले मोतीलाल ने कहा—लड़के से क्या पूछते हो; मुझसे पूछो, जो पूछना हो।

हीरालाल बोला—रोकते क्यों हो काका ? पूछने दो मुझसे। जवाब देकर मुहँ ठीक कर दूँगा। उस चिट्ठी की बात पूछते होंगे। पूछो, क्या पूछते हो ?

अजीत का मुहँ तमतमा आया। यह लड़का इतना धृष्ट होगा, इसकी कल्पना उसे न थी। बोला—अच्छे सपूत हो, कुल का नाम इसी तरह उजागर करोगे! हाँ चिट्ठी की ही बात पूछने

आया हूँ। तुमने जमना के नाम की एक चिट्ठी डाकिये से लेकर छिपा ली है?

"मैं तुमसे पूछता हूँ कि पूछने वाले तुम कौन हो? क्या तुम कोई थानेदार-हाकिम हो जो तुम्हें बताऊँ। जाओ अपने घर, मैं तुम्हें नहीं बताऊँगा।"

कहकर हीरालाल वहाँ से चला गया।

कुछ बुरा लगने पर भी मोतीलाल को प्रसन्नता हुई। वह अजीत को इस तरह कड़ा जवाब नहीं दे सका था। उसे सन्तोष हुआ कि पढ़-लिखकर यह तहसीलदार नहीं बन सकेगा तो क्या, लेन-देन और जगह-जमीन का प्रबन्ध मुझसे अच्छा करेगा।

अजीत उठ खड़ा हुआ। बोला—लड़का है, इसलिए जाने दिया, और कोई होता तो इसी समय देख लेता। अच्छी बात है, मैं अभी थाने में रपट करता हूँ।

मोतीलाल ने हाथ पकड़कर उसे बिठाया। कहा—यह लड़का ऐसा ही है। किसीकी मानता थोड़े है। हाँ, चिट्ठी की बात क्या है?

"चिट्ठी की बात तुम नहीं जानते चौधरी? हरेक बात में चालबाजी ठीक नहीं है। लड़के ने चिट्ठी कहीं खोदी तो खोदी, पर यह तो मालूम हो कि उसमें लिखा क्या था?"

"डाकिया कहता है कि उसने जमना की कोई चिट्ठी हीरालाल को दी? वह दूसरे की चिट्ठी दूसरे किसीको क्यों देगा? फिर भी मैं अकेले में उससे सब बात पूछकर तुम्हें बताऊँगा। इस समय वह कुछ न बतायगा। तुमने उसकी बातें सुन ही ली हैं। ठंढेपन से पूछना पड़ेगा।"

"तुम जैसा पूछोगे वह जान लिया। अच्छा देखूँगा।"—कहकर अजीत तेजी से चला गया।

(२८)

जमना कहाँ जाय, क्या करे, उसे सूझ नहीं पड़ता। सब तरफ जैसे उसके लिए शून्यता छा गई है। पति के जीवित होने का विश्वास पहले भी उसे था। परन्तु पहले वह अप्रत्यक्ष था, अप्रमाणित था। अप्रत्यक्ष और अप्रमाणित ईश्वर की भाँति। ऐसे ईश्वर को कोई कहीं पा सकता है, किसी समय वह दूर नहीं होता। आज वह प्रमाणित है, प्रत्यक्ष है। उसे पाने के लिए वह कहाँ जाय, क्या करे? आज वह सर्वत्र नहीं है। उसका एक निश्चित स्थान है, एक निश्चित रूप है। अब किसी प्रतीक से काम नहीं चल सकता। अब तो उसे एक निश्चित केन्द्र में उपलब्ध करना होगा।

बन्दीघर में बाहर के लिए बन्दी छटपटाता रहता है। जमना भी पहली अवस्था में कम व्याकुल न थी। अब वह उस अवस्था के बाहर आ खड़ी हुई है, तब और भी अधिक व्याकुल है। इतनी बड़ी स्वतन्त्रता में, इतने बड़े विस्तार में उसे कोई आश्रय नहीं दिखाई देता।

आँगन में वह कहीं के लिए जा रही थी, सहसा रुककर खड़ी हो गई। अपने आपमें डूबी कुछ देर खड़ी रही और फिर चलने लगी। चल रही या खड़ी है, इसका बोध उसे न था। वह न-चलना भी इस चलने के बराबर था और वह चलना भी उस न-चलने के बराबर है!

एक ओर से आकर हल्ली उसके पैरों से लिपट गया। ऊँचा मुहँ करके उसने कहा—माँ, तुम इतना दुखी क्यों हो?

मुझे बताओ माँ, तुम इतना दुखी क्यों हो ?

जमना उससे लिपट कर रो पड़ी। इसके पहले वह हल्ली के सामने रोई न थी। रोई न थी, परन्तु जैसी हालत में थी, वह रोने से बुरी थी। यह रो पड़ना ही उससे अच्छा है।

हल्ली भी रो पड़ा। बोला—माँ, तुम रोओ नहीं, रोओ नहीं!

"रोऊँ कैसे नहीं बेटा ! जी न जानें कैसा करता है। रो लेने दे, अरे खुलकर रो लेने दे, रोक मत !"

स्वयं रोता हुआ हल्ली माँ के आँसू पोछने लगा। स्थिति ऐसी थी कि बालक ही माँ के आँसू पोछे। हल्ली आँसू पोंछता था, परन्तु वे और अधिक बहते थे।

सहसा हल्ली शान्त हो गया। उसने कहा—माँ, तुम रोओ नहीं। तुम्हीं तो कहती हो कि भगवान जो करते हैं उसका फल बुरा नहीं होता।

जमना यही नहीं और भी बहुत उपदेश की बातें हल्ली को सुनाती है। पर आज न जानें कितनी बेचैनी उसके मन में आ पहुँची कि ये बातें उससे दबकर हतचेत-सी हैं। अपनी बात अपने मुख की तरह आज वह स्वयं नहीं देख सकती।

हल्ली ने कहा—मैं इस जून मदरसे न जाऊँगा। तुम्हारे पास यहीं रहूँगा। मेरा जी आज अच्छा नहीं है। साँझ को तुम मेरे लिए ताजी रोटी न बनाना। तुम्हारा जी भी अच्छा नहीं है। मुझे भूख न लगेगी।

इसके पहले जमना को अनुभव नहीं हुआ था कि हल्ली का शरीर गरम है। यह अब उसे जान पड़ा। डरकर उसने कहा—अरे तुझे तो जुर है !

"जुर नहीं है। तुम्हें दुखी देखकर जी न जानें कैसा हो

गया, इसीसे जान पड़ता है।"

बरसात की किसी अँधेरी रात में ऊमस की तरह इस नई चिन्ता ने आकर जमना को विकल कर दिया। उसने कहा—जुर है तो। अब तू इधर-उधर हवा में मत फिर। खाट बिछा दूँ, चल अच्छी तरह लेट जा।

"तुम रोती तो हो, इसी से जुर बढ़ता है।"

हल्ली ने खाट पर लेट कर माँ को पास बिठा लिया। मामूली हालत में वह साधारणतः इस तरह कभी न लेटता, परन्तु इस समय वह लेट ही गया।

दो तीन घण्टे बाद जमना आँगन में अकेली बैठी थी। कुछ करने को उसका जी नहीं चाह रहा था। हल्ली का ज्वर कुछ था नहीं, वह बाहर चला गया था।

रूपा आई। रूपा दुःख के दिनों में उसके साथ रह चुकी थी, इसलिए उसका आना जमना को बुरा नहीं लगा।

रूपा ने कहा—तुम इस तरह अकेली बैठी रहती हो, यह बुरा है। चार जनों में बैठने से ही दुःख बँटता है।

कुछ इधर-उधर की बातें करने के बाद कहा—होरीपुरा के माते को मैं ऐसा नहीं जानती थी।

जमना ने सिर हिला दिया। न जानें उस समय वह कैसी अन्यमनस्क थी।

"सब कहीं बुराई हो रही है। कोई जानता न था कि वे ऐसा काम कर सकते हैं।"

जमना ने कहा—कोई किसी के मन की नहीं जानता बहिन। अपना भाग फूट जाता है तभी ऐसा होता है।

रूपा बोली—भाग किसी का क्या फूट जाता है! आदमी

को किसीको ऐसी बुराई नहीं विचारनी चाहिए। जब हल्ली भागा तब उसका पता लगाने के लिए उन्होंने दिन-रात जैसा पसीना बहाया, उसे देखकर मैं सोचती थी कि आज कल ऐसे पुरुष भी होते हैं ! सब कोई धन्न-धन्न करता था। मैं क्या जानूँ कि इस तरह भीतर से मिलकर भी किसीकी जड़ काटी जाती है। जमना ने सँभल कर पूछा—क्या होगीपुरा के माते की कह रही हो ?

"और सुनती क्या थी ?"

"मैंने समझा और किसीकी कह रही हो। यही जैसे चौधरी की, हीरालाल के बाप की।"

रूपा को जमना के प्रति बड़ी दया-सी हुई। उसने सोचा, दुःख के मारे कहीं यह पागल न हो जाय।

जमना ने पूछा—माते के बारे में क्या सुना है ?

रूपा ने संकोच के साथ कहा—बुरी बुरी बातें हैं। किसी तरह जबरदस्ती से तुम्हारे घर आकर तुम्हारी जगह-जमीन के मालिक बनने की चाल चली है। परदेस से उनकी चिट्ठी आई थी उसे ऊपर के ऊपर दबाकर लिख दिया कि हल्ली—कहने की बात नहीं है। ऐसी बातें जवाब में लिख दी हैं कि वे यहाँ न आवें।

जमना चुपचाप बैठी रही। जान नहीं पड़ता था कि उसके मन में क्या हो रहा है। रूपा ने फिर कहा—तुम्हारे बारे में भी बहुत-कुछ उड़ रहा है। मुझे बिसवास नहीं हुआ।

"मेरे बारे में जो सुना हो, ठीक होगा"—कहते कहते जमना की आँखों में आँसू उतर आये।

रूपा बोली—तुम कैसी बात करती हो। क्या मैं जानती

नहीं, तुम कैसी हो।

"तुम नहीं जानती हो। मैं तो आज के दिन तुम्हें मुहँ तक न दिखा सकती। जिनकी बुराई फैल रही है, उन्हींने मुझे बचा लिया। मैं तो पापिन हूँ पापिन! उसीकी सजा मिल रही है। आज वे कहीं बीमार पड़े हैं और मुझे कुछ खबर नहीं मिलने पाती! पाप मैंने किया, दुःख किसीको मिल रहा है। मुझे पता-ठिकाना मिल जाता तो क्या मैं वहाँ पहुँच न जाती। माते कहते थे कि पाप केवल इसलिए बुरा नहीं है कि उससे अपने आपको नरक मिलता है। बुरा वह इसलिए है कि उसकी दुर्गन्ध से दूसरे का दम भी विना घुटे नहीं रहता। साधु-सन्त के मुहँ से उन्होंने सुना था, झूठ कैसे पड़ेगा। यह मेरा ही पाप है कि दूर परदेस में वे अकेले छटपटा रहे हैं। यह मेरा ही पाप है कि यहाँ माते को मेरे कारन सिर नीचा करना पड़ता है।"

आँसू जमना की आँखों में झलक आये थे, अब वे गालों पर बहकर झरने लगे।

रूपा को बहुत विस्मय हुआ। वह जमना को बहुत श्रद्धा करती थी। कोई जमना के खिलाफ कहता तो वह लड़ पड़ती थी। परन्तु यह क्या, जमना स्वयं अपने मुहँ से अपने को पापिन कह रही है! मन ही मन बोली—सच है, किसी दूसरे के जी की कोई क्या जाने कि वह कैसा है!

(२६)

राधे ने पुकारा—काकी, ओ काकी !

भीतर से उत्तर आया—क्या है राधे भैया ?

जमना झट-से निकल आई। राधे घबराया बोल रहा था। उसने कहा—हल्ली ने फौजदारी कर दी है।

"फौजदारी कर दी ?"

"हीरा को मार रहा था, अधमरा कर डाला है।"

"तुम सबने बचाया क्यों नहीं ?"

"हम कोई उसके पास जा थोड़े पाये। जो बचाने जाता उसे भी वह मारता। और हल्ली का भी दोस न था। हीरा मरम की बात करता है।"

जमना आगे बढ़ने को हुई थी, राधे का ब्यौरा सुनने को खड़ी हो गई।

राधे ने कहा—हल्ली को बेजा गुस्सा नहीं आया। कोई किसीको गाली दे तो चुपचाप कौन सुन लेगा। हीरा कहने लगा—'मैं गाँव का मुखिया हूँ, लम्बरदार, जमींदार हूँ। तुम नीच जात हो। तुम्हें मैंने बचपन में ही ऐसा परास्त किया कि मरते दम न भूलोगे। जिन्दगी भर तुम्हें इसी तरह नाकों-नकेल न किये रहूँ तो कहना।'

जमना बोली—इसमें इतना लड़ने की क्या बात है ?

"यही अकेला नहीं कहा था। वे बातें कहने की नहीं हैं।"

जमना आगे बढ़ने की सोच रही थी, अब पीछे लौट आई।

थोड़ी देर बाद हल्ली आता हुआ दिखाई दिया। अपने शरीर से धरती पर गुत्थम-गुत्थी हो जाने की धूल उसने पोंछ

डाली थी, फिर भी कहीं कहीं उसके टीके अब तक लगे थे। खरोंच लगने से एक हाथ की कोहनी लोहू-लुहान थी। कुरता फटा हुआ। मन के ऊपर न जानें किस चिन्ता, किस पीड़ा का बोझ आ पड़ा था। जैसे वह बचपन को बहुत पीछे छोड़कर किसी बहुत बड़ी मंजिल की क्लान्ति अपने सिर पर लिये हो।

जमना ने सोचा था कि हल्ली को इस झगड़े के लिए वह डाँटेगी नहीं। भाव ऐसा दिखायगी कि उसने जैसे कुछ देखा-सुना नहीं है। परन्तु लड़के की ऐसी धज देखकर उसका क्रोध उमड़ आया। वह क्रोध हल्ली के लिए न था, परन्तु पड़ा उसी पर।

उसने कहा—क्यों रे, कितना समझाती हूँ, किसीसे झगड़ा मत कर ! नहीं मानता है तो अब ले ! वहाँ पिट आया है, यहाँ मैं पीटती हूँ।

हल्ली पीछे नहीं हटा। उसने कहा—तुम भी पीट लो। मैं सभीसे पिटने के लिए हूँ।

जमना ने मारने के लिए हाथ उठाया था, किन्तु रुक गई। बोली—हीरालाल को क्यों पीटा ?

"अभी पीटा नहीं है। पीटूँगा, देखना ! फाँसी भले लग जाय, पीटे बिना न छोड़ूँगा।"

जमना सन्नाटे में आ गई। हल्ली का ऐसा उद्धत स्वभाव उसने नहीं देखा था। जरा धमकाया नहीं कि सिकुड़कर कोने में आ गया। अभी थोड़ी देर पहले जो बात उसमें नहीं थी, वह कहाँ से आगई ?

बोली—तू उससे फिर झगड़ेगा ?

"हाँ, उसे फिर पीटूँगा !"

"बहुत दिन से पिटा नहीं है, इसीसे"—कहकर जमना ने

उसे एक थप्पड़ जमा दी। हल्ली अकड़ गया। जैसे इसका कुछ असर उस पर न हुआ हो।

माता कठोर नहीं है। वह लड़के को धमकाती है, पीटती है, पर इसकी व्यथा उसे कम नहीं होती। हल्ली को खींचकर जमना ने अपने से चिपका लिया। पीठ थपथपाकर बोली—आज तू कैसा हो गया रे, बता तो।

यह थपथपाना थप्पड़ से भारी बैठा। वह सिसक कर रोने लगा। बोला—"नहीं, मुझे छोड़ दो!" यह उसने कहा तो, पर छूटने के लिए स्वयं प्रयत्न नहीं किया।

जमना ने उसे और जोर से अपने से सटाकर कहा—रो मत! अच्छे लड़के किसीसे झगड़ते नहीं हैं।

हल्ली बोला—तुमने मुझे मारा क्यों? मैंने तो कोई बुरा काम नहीं किया।

"तूने हीरालाल को तो पीटा है। तेरी उससे नहीं बनती तो उससे दूर रहा कर।"

हल्ली को फिर गरमी आ गई। बोला—वह जहाँ मिलेगा वहीं पीटूँगा। क्यों वह बुरी बुरी बातें कहता है? कहता है,—हल्ली वल्द अजीत! मेरी माँ के लिए कोई बुरी बात कहेगा तो उसकी जीभ खींच लूँगा।

जमना की आँखें सजल हो उठीं। उसे जोर लगाना पड़ा कि ये आँसू बिखरकर कहीं पानी की बूँदें न हो जायँ। आँसू सुख के थे या दुःख के, किसे मालूम। जमना भी नहीं जानती कि यह क्या है! इतना भर जानती है कि कुछ उसके भीतर लबालब भर आया है। वहाँ वह असाता नहीं है, इसीसे इस तरह ऊपर छलक उठा। कोई बात मुहँ से वह निकाल नहीं

सकी। उसने हल्ली को जोर से अपनी भुजाओं में कस लिया।

माँ का आवेग हल्ली से छिपा न रह सका। उसने माँ के मुख पर दृष्टि जमा कर कहा—माँ, रोओ मत। कोई तुम्हें कुछ कहेगा तो मैं देख लूँगा। मुझे किसीका डर नहीं। बप्पा नहीं हैं तो क्या मैं तो हूँ। अजीत ने ही यह बुराई फैलाई है। अब मैं उसे अपने घर न आने दूँगा। तुम घबराओ नहीं। लट्ठ लेकर मैं पहरा दूँगा, देखें कैसे आता है।

कई दिन बाद की बात है। हल्ली और हीरा के बीच मार-पीट का वह झगड़ा पुराना पड़ गया था। चौधरी परिवार की ओर से जो डाँट-फटकार, धमकी और क्रोध की आँधी उठी थी, उसका तर्जन अब शान्त था। फिर भी जमना का जी किसी काम में नहीं लग रहा था। वह उदास थी। हल्ली मदरसे गया था। इधर से उधर उधर से इधर जाकर उसने निश्चय किया कि वह पानी खींच लावे। आवश्यकता इसकी न थी। परन्तु वह कुछ न करे तो काम कैसे चलेगा? गगरी का पानी अधभरी नाद में उड़ेल कर पानी खींचने को गिर्री और रस्सी उसने हाथ में ली थी कि बाहर से सुनाई दिया—जमना मातौन हैं?

यह आवाज तो डाकिये की है! जमना का हृदय जोर से धड़क उठा। हाथ का सामान नीचे रख कर वह बाहर की ओर तेजी से झपटी।

डाकिये ने कहा—एक चिट्ठी है,—चार पैसे की बैरंग।

चिट्ठी है! चार पैसे की बैरंग,—इसके लिए तो जमना अपना सब कुछ दे सकती है। क्यों कुछ अधिक इसने नहीं कहा? अपना सब कुछ वह इसके बदले में देने को तैयार है।

चिट्ठी देकर डाकिया चला गया। उसे लेकर जमना के

हाथ, पैर काँपने लगे। क्या है इसके भीतर ? पहली चिट्ठी का जवाब न पाकर ही उन्होंने यह दूसरी चिट्ठी लिखी है। कौन जाने, कितनी नाराजी उन्हें हुई हो। न जानें मेरे बारे में क्या विचारते हों। अच्छे तो हैं ? भगवान मालिक हैं, अच्छे क्यों न होंगे। परन्तु लिखा उन्होंने क्या है ?

जमना की नस नस में तेजी से रक्त दौड़ने लगा। पत्र में लिखा क्या है, आया कहाँ से है ? कोई बुरी खबर तो नहीं है ?—अच्छी खबर हो या बुरी—हाथ की नियति-रेखाओं की तरह सामने प्रत्यक्ष होने पर भी वह तत्काल समझ नहीं पाती।

हल्ली न जाने मदरसे से कब लौटेगा। मदरसे की छुट्टी हो गई हो तो भी रास्ते में कहीं वह रुक सकता है। उसका ठीक नहीं, कब आयगा। पर यह चिट्ठी तो उसीसे पढ़वा कर सुनने की है। तब उसके आने तक रुक ही जाऊँ।

फिर भी अपने निश्चय पर वह दृढ़ नहीं रह सकी। किसीसे पढ़वाने के लिए वह झट से एक ओर जाती दिखाई दी।

थोड़ी देर बाद जब वह लौटी, उसकी आँखों में उन्माद की छाया थी। उसे राधे बीच में मिल गया था। अक्षर पहचान कर, पत्र पढ़कर उसने बताया था कि यह तो हीरा का लिखा हुआ पत्र है जो उसने जमना की तरफ से हल्ली के बाप को लिखा था। न जाने क्या इस पर अँगरेजी में लिखा है, जिसके कारण भेजने वाले के पास लौटा दिया गया है। सब मामला समझ कर वह उसी समय मोतीलाल चौधरी के यहाँ दौड़ी गई थी, परन्तु वे कई दिन के बाहर थे ?

हल्ली तेजी से दौड़ता आया। अस्वाभाविक स्वर में उसने

कहा—कहाँ है हीरा की लिखी वह चिट्ठी ? लाओ तो, मैं अभी जाकर उसकी खबर लूँ !

(३०)

अजीत ने कहा—भौजी, आज मीठा मुहँ करवाओ। बोलो, करती हो वादा ?

जमना ने विस्मय से पूछा—क्या बात है ?

"बिना वादा किये बता दूँ, ऐसा सीधा न समझो। पहले वादा करो, पीछे प्रसन्न न कर दूँ तो कहना।"

अजीत के मुहँ पर उल्लास खेल रहा था। जमना के लिए जो सबसे बड़ी आकांक्षा है, उसीका ध्यान उसे आया। परन्तु भीतर न जानें क्या सन्देह था कि वह आश्वस्त न हो सकी। उसने उदास स्वर में कहा—ऐसा भाग मेरा कहाँ जो किसीका मुहँ मीठा करूँ !

अजीत ने समझा कि मन पर हीरा की उसी चिट्ठी की चोट है। उसने कहा—उस चिट्ठी की बात से इतना दुखी क्यों होती हो ? जाने दो उसे चूल्हे में ! मैं कुछ दूसरी खबर—अच्छा अब सुना ही दूँ—लो सदर में वृन्दावन भैया आ गये हैं। शाम की गाड़ी से यहाँ आ जायँगे।

"आ गये हैं !"—जमना ने ऊपर की ओर दोनों हाथ जोड़कर धरती पर वहीं किसीके उद्देश से अपना मत्था टेक दिया। अजीत ने देखा कि उसकी दोनों आँखों से आँसू बहने लगे हैं।

अजीत का हृदय भी भर आया। उसने कहा—भौजी, तुम जिन्दगी भर दुख में रोती रहीं और आज सुख में प्रसन्न होने के समय भी रोती हो।

बगल में बस्ता दाबे हुए हल्ली मदरसे से लौटा। अजीत को देखते ही उसकी प्रसन्नता बिला गई। किसी ओर कुछ देखे बिना वह खट-खट करता हुआ भीतर की ओर बढ़ा। पौर के आले में बस्ता न रखकर आज वह आँगन में कहीं रखेगा।

अजीत ने कहा—सुन तो हल्ली! आज ऐसी बात सुनाऊँ कि मुहँ मीठा हो जाय।

हल्ली ने घूरकर उसकी ओर देखा। वह कुछ कहना ही चाहता था तब तक जमना ने कहा—सुन तो उनकी बात। वे कहते हैं, तेरे बप्पा आगये हैं।

हल्ली को विश्वास न हुआ। उसने पूछा—कहाँ हैं? बहकाते होंगे।

जमना के संस्कार को चोट पहुँची। झूठ समझने से कहीं झूठ ही हाथ में न रह जाय। उसने कहा—नहीं,—सच है।

एक ओर बस्ता पटक कर वह झट माँ से लिपट गया। बोला—कहाँ हैं माँ, बताओ कहाँ हैं? देखो, मैंने कह दिया था कि नहीं!

अजीत ने कहा—मेरे पास आओ तो मैं बताऊँ।

एक क्षण के लिए हल्ली को झिझक हुई और वह अजीत से जा लिपटा। बोला—बताओ कहाँ हैं वे?—सदर में?—मैं जाऊँगा उन्हें अपने साथ लिवा लाने के लिए। माँ चलें, और—और तुम भी चलो काका। धूम धाम के साथ उन्हें लिवा लावेंगे।

थोड़ी देर बाद अजीत उस व्यक्ति को लिवा लाया, जिसने सदर में वृन्दावन को देखा था। उसने बताया कि वह तहसील कचहरी से लौट रहा था, उसी समय उसे एक जगह वृन्दावन ताँगे में दिखाई दिया था। साथ में जगराम और एक दूसरा आदमी था।

जगराम को साथ न देखता तो उसे ध्यान भी न होता कि यह वृन्दावन है। माथे पर बड़े बड़े तिलक थे और साधुओं-जैसा कनटोप। वह दौड़कर ताँगे के पास गया तो वृन्दावन ने भी उसे पहचान लिया। कहीं जाने की जल्दी थी, इससे कुछ ज्यादा बात नहीं हो पाई।

साँझ के समय ट्रेन आती है। अब इतनी प्रतीक्षा का समय बहुत कठिन है। जमना ने प्रतीक्षा में बरसों की अवधि पार की है, पर अब थोड़े-से घन्टे उसके लिए अथाह हो उठे हैं। हल्ली अभी से कुछ लड़कों को साथ लेकर स्टेशन जा पहुँचा है। जमना घर में अकेली है। इस एकान्त में न जानें कितनी बातें उसके मन में आ-जा रही हैं। कई दिन से उसका जी अशान्त था। इसीसे इधर वह अपनी पौर गोबर से लीप नहीं सकी। उसने कहा—ऐसे में ही वे आज आयँगे। बरसों लगातार चौकस बनी रही कि न जानें कब वे अचानक आ सकते हैं। आज जब उनके आने का दिन आया तभी यह आँगन लिपा-पुता नहीं। एक बार उसके जी में आया—अभी समय है, लीप-पोत सकती हूँ। फिर तुरन्त ही उसे यह विचार अच्छा नहीं लगा। सोचा,—जैसा है, सब वैसा ही रहे। साज-सिंगार करके उन्हें रिझाना नहीं है।

उसे अपने ससुर की याद आने लगी।—हल्ली के साथ इसको वे मेरे हाथ में सौंप गये थे। कितना विश्वास था उन्हें मेरे ऊपर! न जानें कौन-सी ऐसी बात उन्होंने मुझमें देख ली थी। मुझमें तो कुछ नहीं था, कुछ नहीं है। थोड़े में ही मैं घबरा जाती हूँ, थोड़े में ही मेरा जी इधर-उधर हो जाता है। मैं कर क्या सकती थी, मुझमें बल-बूता क्या था। जो कुछ हुआ, उन्हींके असीसने से हुआ, उन्हींके सुकृत से हुआ। अभी आये नहीं हैं, इससे क्या? यह पता तो लग गया है कि हैं अच्छी तरह; जो

संकट था, कट गया है। अरे मैं दुःख में इतना घबराती क्यों थी? जिसे मैं वज्र जैसा कठिन समझती थी वह फूल जैसा मुझे छू गया है। भगवान ने मुझे देवता-ऐसे ससुर दिये थे। फिर ऐसा न होता तो क्या होता? ऊपर स्वर्ग से आज वे सब कुछ देख रहे होंगे। मेरे सिर पर हाथ की छाया करके वहीं से फिर असीस रहे होंगे। मुझे ऐसा लगता है कि सचमुच उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रख दिया है।

जमना का जी इस समय रो लेने को करता है। वह नहीं चाहती कि इस समय कोई दूसरी बैठने के लिए आकर उसके इस एकान्त सुख में बाधा डाले।

(३१)

ट्रेन आई और चली गई। जो दो एक सवारियाँ उस पर से उतरीं, वृन्दावन उनमें न था। हल्ली को इससे दुःख से अधिक लज्जा हुई। उसने सोचा, इतने लड़कों में ढिंढोरा पीटकर मैं क्यों इन्हें साथ लाया? अकेला चुपचाप आता, तो क्या बुरा था। पर उसके मन में तो आनन्द था। आनन्द की जो घटा उसके हृदय पर छा गई थी, उसकी गरज छिपी कैसे रहती? फिर भी उसका पिता आया नहीं है। अब वह किसीसे क्या कहेगा, उसकी समझ में नहीं आता। आसमान जैसी निर्लज्जता उसमें नहीं है। अचानक कहीं से जोर शोर की घटा तड़कने लगे और थोड़ी ही देर में बरसे बिना झट-से खिसक जाय तो इससे आसमान को क्या? वह फिर पहले जैसा धूप में खिल कर हँस सकता है! हल्ली से यह कैसे हो सकता है? वह चाहता है कि कि वह जोर से रो पड़े। परन्तु करे क्या, इतने साथियों के सामने

उससे रोते भी नहीं बनता।

फूलों का एक गजरा बनाकर वह साथ ले गया था। उसने मदरसे में देखा था कि जब कोई बड़ा आदमी आता है तो उसका इस तरह सम्मान होना चाहिए। वह गजरा अब भी उसके हाथ में था। उसकी इच्छा हुई, इसे तोड़ मरोड़ कर कहीं फेंक दे।

एक लड़के ने कहा—उनके पास पैसे कहाँ रक्खे जो रेल में सवार होकर आते। पैदल आयँगे।

हल्ली को कुछ सहारा मिला। जब और कुछ नहीं होता तब जगह-जगह फटे हुए जीर्ण वस्त्र से भी लज्जा ढँकनी पड़ती है।

राधे ने कहा—मैंने कह न दिया था कि मैं अजीत का विश्वास नहीं करता। तुम्हारे घर पहुँचने के लिए अजीत ने यह चकमा फिर दिया।

हल्ली ने संक्षेप में कहा—ठीक कहते हो।

हल्ली ने सच नहीं कहा। उसका मन नहीं कहता था कि उसका बाप आया नहीं है। फिर भी लज्जित मन की आग दबाये रखने के लिए यह राख भी इस समय उसे सहायक हो उठी।

कुछ ठहर कर उसने कहा—आज मंगलवार है। इस दिन घर लौटकर नहीं आया जाता, इसीसे नहीं आये।

राधे हँस उठा—वही अजीत की कही दुहरा रहे हो!

हल्ली अजीत का नाम जान-बूझकर छिपाना चाहता था, पर राधे से छिप न सका। उसके उपद्रव से बचने के लिए उसने दौड़ लगा दी।

अजीत के मन में सन्देह हुआ। मोतीलाल चौधरी कई दिन से बाहर था। एक दिन पहले वह उससे मिलने गया था,

तब सुना था। सहसा उसी समय एक आशंका उसे हुई थी, पर उसने उस पर ध्यान नहीं दिया। अब इस समय उसके जी में वही बात फिर बड़े जोर से आ उठी। ऐसे में चुप रहना उसके लिए असम्भव था। थोड़ी देर बाद एक गाड़ी सदर के लिए जाती थी, वह उस पर सवार हो गया।

रात में ही उसने चेष्टा की, पर शहर में कहीं वृन्दावन का पता नहीं चला। लाचार होकर उसे दूसरे दिन की प्रतीक्षा करनी पड़ी।

दूसरे दिन जगराम को ही खोजने में उसका बहुत समय निकल गया। पहला घर उसने छोड़ दिया था। अजीत को उसका नया घर मिल तो गया, पर उस समय वह वहाँ नहीं था।

दुबारा वह जगराम के घर की ओर जा रहा था, इतने में मोतीलाल चौधरी उसे दिखाई दिया। उसने जोर से आवाज दी—चौधरी, ओ चौधरी, सुनो तो!

चौधरी ने मुहँ मोड़कर कहा—क्या है?—इस समय मैं जल्दी में हूँ। फिर मिलूँगा!

कहकर वह पहले से भी तेजी से पैर बढ़ाता हुआ निकल गया। अजीत ने सोचा—भागना चाहता था। पकड़कर दो बातें क्यों न कर लीं? फिर कहा—जाने भी दो इसे। मैं पता ले लूँगा।

मोतीलाल का काम जिस वकील के यहाँ होता था, अजीत उसके यहाँ जा पहुँचा। वकील साहब अभी अपनी बैठक में नहीं आये थे। कुछ लोग उनकी प्रतीक्षा में बेञ्च पर बैठे बैठे बीड़ी सुलगाकर आपस में धीरे धीरे बात कर रहे थे। चौड़े के डेस्क पर कागज रखकर एक मुंशी कुछ लिख रहा था। नये आदमी

की आहट से सिर उठाकर उसने पूछा—क्यों, क्या बात है ? मुकद्दमा है ?

अजीत ने कहा—मुकद्दमा नहीं, मोतीलाल चौधरी को देखने आया था।

मुंशी सिर नीचा करके फिर लिखने लगा। लिखते लिखते ही उसने उत्तर दिया—यहाँ नहीं है।

अजीत बोला—यहाँ आये तो थे, कहाँ गये ?

"कहाँ गये, क्या मैं सबका इजहार लिखता फिरता हूँ ? जाओ, परेशान मत करो।"

बेञ्च पर बैठे हुए एक आदमी ने कहा—मुंशीजी, बिगड़ते क्यों हो, अच्छी तरह क्यों नहीं कह देते ?

मुंशी ने लिखना बन्द करके कहा—हुजूर का मुँह खुला। यहाँ बैठकर कलम घिसना पड़े तब मालूम हो। इस समय तो कहते हैं, मुन्शीजी, ऐसा करते वैसा करते, लिखाई के दाम देने का वक्त होगा तो चें-में करेंगे, कहेंगे,—इस वकालतनामे की लिखाई यह बहुत है ! अच्छी तरह क्या जवाब देता,—सबेरे सबेरे उस सूम को तलाश करने आ गये हैं। भगवान मालिक है जो आज खाना नसीब हो। कौन उसका नाम ले, कल उसकी एक रजिस्ट्री के काम के सिलसिले में दिन भर बरबाद किया और जब मुन्शीजी के देने-लेने की बारी आई तो साफ कह बैठा—अभी कुछ नहीं बचा, फिर आऊँगा। उसका उधार हमेशा चलता है। ऐसों को हमारे वकील साहब ही मिलते हैं, और कहीं जाय तब पता चले।

अजीत बातचीत सुनने के लिए बैञ्च पर बैठ गया।

एक मुवकिल ने पूछा—क्यों मुन्शीजी, हो गई उसके

बेचेनामे की वह रजिस्ट्री ? वही खेत और कुएँ वाली ?

वकील साहब के आने में अभी देर थी। मुन्शीजी ने भी एक बीड़ी सुलगाई और कहा—होगई। होती क्यों नहीं, मैं जो साथ था। नहीं तो काम बिगड़ ही चुका था, रजिस्ट्रार ने बीस पखें निकालीं। बड़ी परेशानी हुई। एक दफे तो मेरे जी में भी आया,—मैं क्यों दिमाग खराब करूँ, ऐसे आदमी का काम बिगड़ना ही चाहिए। फिर सोचा,—वकील का यह काम नहीं, मुवक्किल की मदद वह न करे तो वह बेचारा कहाँ जाय। मैं तो सोचता हूँ, अपनी अपने साथ, उसकी उसके साथ।

"पक्की कारखाई सब हो गई ?"

दूसरे मुवक्किल ने पूछा—मामला क्या था ?

पहले ने कहा—मामला होगा और क्या ? आसामी लोग *महाजन की आँख में धूल डालना चाहते हैं। बिन्दा नाम के* एक आसामी ने मोतीलाल से करजा लिया था। इसके बाद वह कहीं चला गया। बरसें हो गईं। उसकी घरवाली से मोतीलाल ने तकादा किया। पर आजकल के जमाने में तकादा सुनता कौन है। वह औरत एक आदमी के घर बैठ गई, उससे आठ-दस बरस का लड़का भी है। चालाकी देखो औरत की, दूसरे के घर बैठ गई और पहले घरवाले का कुआँ और खेत भी दबाये रही। कानून रोज रोज बदलने लगे हैं, लिखा-पढ़ी में कानूनी नुक्स हो गया होगा, मोतीलाल कुछ नहीं कर सका। अब इतने दिनों बाद हाल में उसे पता चला कि बिन्दा कहीं जिन्दा है। वह फौरन वहाँ के लिए उड़ गया। वृन्दावन घर लौटने की ही सोच रहा था। इसके पहले वह किसी आफत में था। अपनी देवीजी की करतूत सुनकर बेचारे को बड़ा सदमा

पहुँचा। उसने रुपयों का रुक्का तो वहीं लिख दिया, मगर मोतीलाल ने सोचा कि रुक्का क्या शहद लगाकर चाटेंगे। उसे किसी तरह राजी करके वह यहाँ घर लाया और कल खेत वगैरह का बेचान कराके रजिस्ट्री भी करा ली। बिन्दा को अब इस ओर से ऐसी चिढ़ होगई है कि शायद ही वह कभी यहाँ का नाम ले। काम करके फौरन यहाँ से भागना चाहता था। सच तो यह है कि मोतीलाल इतनी होशयारी न करता तो उसके रुपये मार में पड़ ही गये थे। आज कल अब किसीसे लेन-देन का धरम नहीं रहा।

अजीत ने कहा—सब झूठ है!

"झूठ कैसे? कल यहाँ वकील साहब के सामने ही तो बात हो रही थी।"

अजीत बोला—वकील साहब कहीं के परमेश्वर हैं, जो उनके सामने झूठ नहीं चल सकता?

मुन्शी ने पूछा—कौन हो तुम, जो इस तरह बदतमीजी से बोलते हो?

"बदतमीजी कोई दूसरा करता होगा। मैं सच कहता हूँ। मेरा नाम अजीत है।"

"अजीत तुम्हीं हो!"

मुन्शी और वह आदमी एक दूसरे की ओर देखकर हँसे। अजीत ने कहा—हाँ, अजीत मैं ही हूँ। वह औरत किसी दूसरे के घर नहीं बैठी। उसके साथ बहुत बड़ा धोका किया गया है।

मुन्शी ने कहा—धोका किया गया है तो अदालत में जाकर दरख्वास्त दो। यह वकील साहब का कमरा है, यहाँ खामोशी से बात करनी होगी।

मुवक्किल ने कहा—दोस्त, बहुत दिन तक तो खेत और कुएँ का मुनाफा लिया, अब तो बेचारे महाजन पर रहम करो। अब दरख्वास्त वगैरह कारगर न होगी। अभी मुन्शीजी से सुन तो चुके हो कि सब कारखाई पक्की हो चुकी है। औरत और अपने लड़के को लेकर अब दूसरा धन्दा खोजो, मुकदमेबाजी में बरबादी के सिवा कुछ नहीं होता।

अजीत ने कहा—वह लड़का वृन्दावन का ही है। बहुत बड़ी जालसाजी की गई है। मैं वकील साहब से बात करूँगा।

मुन्शी ने कहा—यह पाइन्ट अच्छा है। अदालत में यह साबित कर दो कि लड़का पहले घरवाले का है तो लड़ाई कुछ चल सकती है। मुमकिन है, खेत-कुआँ तुम्हारे ही हाथ बना रहे। मगर हमारे वकील साहब इस मामले को नहीं ले सकते। वे दूसरे फरीक के वकील हैं।

अजीत ने कचहरी जाकर पता लगाया कि वृन्दावन सचमुच खेत और कुएँ के बेचेनामे की रजिस्ट्री कराके फिर कहीं चला गया है।

(३२)

पता चला है कि दो एक दिन में कभी अमीन आकर जमना के खेत और कुएँ की बेदखली कर जायगा।

जमना के लिए इस समाचार का कुछ महत्व न था। भादों की रात में कहीं दो एक बचे-खुचे तारे भी किसी बादल से ढँक जायँ, या टिमटिमाते रहें, इस पर किसीका ध्यान नहीं जाता। उनके प्रकाशित रहने न रहने में रात को क्या? जमना ने वह समाचार सुन भर लिया।

इधर हल्ली को पाँच-सात लंघनें हो गई हैं । जमना को दिन-रात जागना पड़ा है । लड़के को होश न था । हीरा और अजीत का नाम लेकर वह बराबर बकता रहता था। इसीसे इस बीमारी में अजीत जमना की सहायता नहीं कर सका । उसे देखकर रोगी की बकझक बढ़ जाती थी ।

पति के आकर लौट जाने की चोट के बाद ही लड़के की यह बीमारी उसके सामने आई थी । विपत्ति के ऊपर ही विपत्ति आती है । इसमें भी कुछ अर्थ है । एक रेखा के सामने दूसरी रेखा खिंचे बिना पहली हलकी नहीं पड़ती । जमना की पहली दुःख-रेखा छोटी हुई हो या न हुई हो, पर यह ठीक है कि इन दिनों उसका समस्त ध्यान दूसरी पर ही केन्द्रित हो गया था ।

अब हल्ली का ज्वर उतर गया है, पथ्य भी कई हो गये हैं, पर उसे बहुत घूमने-फिरने नहीं दिया जाता । मुहल्ले में इधर-उधर कहीं हो आने की ही उसे छुट्टी है ।

उसने आकर कहा—माँ, लोग तो कहते हैं, कुआँ और खेत अब भी हमारे हाथ रह सकता है । मुझे साहब के सामने जाकर दरखास करनी पड़ेगी ।

जमना ने कहा—तू इन बातों में नहीं समझता, अभी यह कुछ मत सोच ।

"मैं नहीं समझता, पर मेरे साथ वकील रहेगा, तुम रहोगी । वकील हाकिम को सब बात अँगरेजी में अच्छी तरह समझा देगा।"

जमना ने कुछ उत्तर नहीं दिया । इससे बल पाकर हल्ली ने फिर कहा—सब कहते हैं, हमारे साथ बहुत बड़ा धोखा हुआ है । क्या हाकिम की समझ में इतनी बात न आयगी !

"मैं तुझे फिर बताऊँगी । अभी ऐसी बातें सोचने से तेरा

जी फिर खराब हो जायगा।"

"खराब नहीं होगा। फिर के लिए समय कहाँ है? अमीन जो आ रहा है।"

"आ रहा है तो उसे देखेंगे। अब तेरे पथ्य की तैयारी करूँ।"

आज कल हली को भूख बहुत लगती थी। पथ्य की बात से प्रसंग बदल गया।

सन्ध्या समय जमना किसी काम से मुहल्ले में निकली थी कि वह अचानक खेत की ओर बढ़ गई। किसी अदमनीय इच्छा ने उसे उस ओर खींच लिया। उसके विरुद्ध वह न हो सकी।

सब कुछ वही था, भिन्नता कहीं न थी। वही पक्का कुआँ, वही उसके पास आम का गुल्ला, वही खेत, वही उसकी मिट्टी, वही इधर-उधर के हरे-हरे बिरछे, वही पगडंडी और वही पहले जैसे उस पर इधर-उधर आने-जाने वाले। न आज साँझ की लालामी में कुछ कालापन है और न आज यहाँ की हवा में पहले से कुछ अधिक गरमी ही। सब ज्यों का त्यों है। किसीके कान में जैसे दुनिया की कोई खबर नहीं पहुँची। सब के सब ऐसे ही निठुर, ऐसे ही निर्मम हैं!

जमना शून्य मन से इधर-उधर चक्कर काटने लगी। कुएँ के पास आकर एक बार उसकी इच्छा हुई कि थोड़ी देर के लिए यहाँ बैठ जाय। बैठने के लिए झुकी थी कि मुँह के ऊपर विरक्ति लाकर वह उसी दम पीछे हट गई। अब तक जिसे वह अपना समझती रही है, उसके ऊपर आज वह इस तरह क्यों बैठे, जिस तरह कहीं की कोई गैल चलने वाली आकर थोड़ी देर के लिए बैठ जाती है। विराम लेना ही है तो वह कहीं दूसरी जगह लेगी।

आम के पेड़ के नीचे आकर खड़ी हो गई। देखा, ऊपर

कहीं पत्तों में दो एक फल लगे हैं। ऊपर हैं, इसीलिए अब तक बचे रह सके। इस वृक्ष से उसे कितना मोह था! कितने प्रेम से घड़े पर घड़े खींचकर उसने इसे सींचा है। अंकुरित होने के दिन से इसका तिल तिल बढ़ना वह देखती आई है। अब यह इतना बड़ा है कि उसे सिर ऊँचा करके अब इसे देखना पड़ता है। अब यह भी उसका नहीं रहा। बड़ा हो गया है, माता के दुलार की अब क्या आवश्यकता? स्वयं कमा कर खा सकने वाले कठोर बेटे की तरह दूसरे के यहाँ माता की सुध इसे न उठेगी। संसार में पुरुष ही अकेले निर्दय नहीं होते। पशु-पंछी, पेड़-पौधे सबके भीतर एक तरह का खून है!

जमना को थकावट थी। अबकी बार पेड़के तने से टिककर वह बैठ गई। यह पेड़ उसीका है। छीन ले कोई, अपना इतना अधिकार इस पर से वह न छोड़ेगी। कोई कुछ कहे, वह किसी तरह न छोड़ेगी।

रात की अँधेरी आगई थी। पास की पगडंडी पर कुछ किसान लड़के किसी गीत की एक कड़ी मिलकर गाते हुए निकल गये। गीत का स्वर दूर जाकर धीमा पड़ता हुआ वहाँ की नीरवता में धीरे धीरे विलीन हो गया। विलीन होकर भी एक दम विलीन नहीं हुआ। जमना के हृदय में जाकर वह क्रन्दन करने लगा,—बचाओ, मुझे बचाओ!

इसी स्वर में तो उस दिन वे लोग गा रहे थे—जमना को याद आने लगा। बात बहुत पुरानी है, पर उसे अच्छी तरह याद आती है। मेले में जाने का दिन था। इस रास्ते से अनेक बैलगाड़ियाँ मेले के लिए जा रही थीं। उस गाड़ी के आदमी इसी स्वर में गा रहे थे। किसी बच्चे के लिए पानी लेने इस कुएँ पर वह गाड़ी रुकी। जमना की गाड़ी भी सजी-बजी खड़ी

थी। उस गाड़ी से उतर कर एक अपरिचित युवती उसके पति से इस तरह हँसी-मजाक करने लगी कि जमना को बहुत बुरा लगा। उसे बुरा लगे या भला, यह कौन देखता है। उसके पति ने उस नई गाड़ी के पीछे ही अपनी गाड़ी बढ़ा दी। रास्ते में आते जाते समय खूब चुहल रही। बातचीत में दोनों के बीच कहीं का नाता भी आ जुड़ा। उसके बाद उस युवती से जमना का पति कभी कभी मिल लेता था, यह भी वह जानती है। उसकी सूरत उसे नहीं भूलती। परदेश में भी पति के साथ ऐसी ही किसी युवती की कल्पना जमना ने की है। नीली बूटेदार चूनरी, घेरदार लँहगा, माथे पर नई चमकती हुई टिकुली, हाथ-पैरों में चाँदी के कुछ गहने। उस गीत के स्वर के साथ जमना के सामने वह युवती इस समय अचानक फिर आगई। अँधेरे में यह उसीकी टिकुली चमकती है, जैसे किसीने एक तेज चिनगारी रख दी हो!

जमना उठ खड़ी हुई और अशान्त मुद्रा में इधर-उधर घूमने लगी। इस समय उससे कोई कुछ कहने-सुनने वाला नहीं। इसीसे उसके भीतर की विक्षिप्त नारी इस अकेले में सब बाधाओं से छूटकर स्वछन्द हो उठी है। समय और स्थान का बोध जैसे उसे नहीं था।

"माँ, कहाँ हो?"

जमना चौंक पड़ी। यह तो हली है! रोग की दुर्बलता में यह यहाँ तक कैसे आया? उसने जोर से कहा—मैं यहाँ हूँ, यहाँ! यहाँ तक कैसे आ गया रे?

दोनों कुछ आगे बढ़कर एक दूसरे के पास पहुँच गये। जमना ने उसकी पीठ पर दोनों हाथ रखकर उसे चिपका लिया। बोली—अँधेरे में डर तो नहीं लगा? मैं आने ही वाली थी।

तूने कैसे जाना, मैं यहाँ हूँ ?

लड़के को सुस्ताने के लिए उसे ले जाकर वह कुएँ पर बैठ गई। इस बार उसे संकोच नहीं हुआ। ऐसे अँधेरे में लड़के को वह नीचे जमीन पर नहीं बैठने देगी। न जानें कौन कैसा कीड़ा-मकोड़ा वहाँ हो।

हल्ली बोला—मैं जानता था, तुम यहीं होगी। फिर मेरा जी नहीं लगा, इसीसे चला आया।

अँधेरे में अच्छी तरह दीखता न था, फिर भी जमना ने अनुभव किया कि लड़के के मुख पर वेदना के चिन्ह हैं। अच्छा है, जो वह देख नहीं पाती। विना देखे ही उसकी व्यथा से उसकी छाती फटती है।

हल्ली कहने लगा—मेरे मन में आया कि मैं तुम्हें बहुत सताता हूँ। इसीसे कहने के लिए इसी समय चला आया। नाराज न होना माँ !

"तू मुझे सताता नहीं है मेरे लाल ! तेरे ही कारन अब तक जीती हूँ।"—जमना का स्वर आँसुओं के भरे बोझ से काँप उठा।

"सताता हूँ। तुम्हीं हो जो बुरा नहीं मानती। और कोई होती तो मार मार कर ठीक कर देती। मैं अब तुम्हें सताऊँगा नहीं। मैंने सोच लिया है।"

"क्या सोच लिया है रे ?"

"यही कि मैं 'बप्पा-बप्पा' करके मरा जाता हूँ और वे ऐसे खराब आदमी निकले। आप खुद तो बुरे-बुरे काम करके जेल तक हो आये, और तुम्हें झूठ-मूठ के लिए इतना बड़ा दुःख दे डाला है।"

जमना निर्वाक् होकर बैठी रही। उसके मन की यह पीड़ा लड़के के पास पहुँच कैसे गई ? यही बात इतनी देर से उसके

भीतर सुई की तरह चुभ रही थी। परन्तु इसमें लज्जा कितनी बड़ी है। इस अबोध बच्चे के सामने भी इसके उधर जाने में मुहँ नहीं दिखाया जाता।

हली ने कहा—अब मैं बुरा नहीं मानूँगा। कोई कुछ कहे, इसका डर मुझे नहीं है। माँ, अब तुम यह घर छोड़ दो। हम लोग अजीत काका के घर यहाँ से भी अच्छी तरह रहेंगे। इस घर में रंज के मारे तुम बच न सकोगी। अब मैं अपने बप्पा को बप्पा न कहूँगा।

जमना सिहर गई। मेरे लिए यह कितनी बड़ी बात सोच रहा है! कितना बड़ा मन है इसका! मेरा ही लड़का जो है। सहसा उसके मन में प्रश्न उठा—मेरा ही लड़का अकेला कैसे?

"मानोगी मेरी बात माँ?"

"कैसी लड़कपन की बात करता है रे!"

लड़कपन की बात! लड़कपन की बात क्या अकेला हली करता है? वह भी तो बच्चे की इस बात जैसा ही कुछ सोच रही थी। सब बड़े लोग भी तो अपने को समझदार समझकर बच्चों जैसे ही बहुत काम करते हैं। हली की कितनी ही असंगत बातें, कितने ही असंगत खेल जमना के सामने एक क्षण में तेजी के साथ घूम गये। उसने उसके लिए अपने ऊपर कितने क्या दुःख नहीं उठाये, उसने उसके कितने क्या उपद्रव-उत्पात सहन नहीं किये। इसीकी तरह और भी सब दूसरे हैं। वह किसके ऊपर आज क्रोध करे? कैसी मूर्ख है वह! प्रतिदिन आँखों के सामने सब कुछ देखकर भी यह बात उसकी समझ में अब तक क्यों नहीं आई? दूसरे किसीके सम्बन्ध में कुछ निर्णय करने की शक्ति उसमें नहीं है। स्वयं उसे कष्ट सहन करना पड़े तो वह कर लेगी, उसके निर्णय से किसी दूसरे के प्रति अज्ञात अन्याय

क्यों हो ? दूसरे के सम्बन्ध में आदमी का ज्ञान है ही कितना इस बारे में सब हल्ली के सहवयस्क हैं ! प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर सृष्टि कहा जाता है। इसीसे ईश्वर की तरह वह गहन भी है ईश्वर की तरह कष्ट सहन करके ही उसे उपलब्ध करना होगा। उचित यही है, करणीय यही है ! बाहर आसानी से हम कुछ पाते हैं, वह प्रायः ठीक नहीं होता।

जमना के भीतर एक दीपशिखा-सी चमक गई। एक क्षण में प्रकाश की वाणी जो कुछ उसके भीतर कह गई, उसके बोल उसके लिए परिचित न थे। न थे, फिर भी उसका संकेत समझने में उसे देर न लगी। अपरिचित भी वह चिर-परिचित था बरसों से जैसे वह उसे जानती आ रही है।

उसने उठकर कहा—ऐसी बातें न कर हल्ली। अजात घर जाकर भी तेरे बप्पा ही तेरे बप्पा रहेंगे। इस बात को कोई बदल नहीं सकता। सहले, पक्का होकर इसे सहले। कमजोर क्यों पड़ता है ? जितना अधिक सह सकेगा, उतना ही तू बड़ा होगा

हल्ली का हाथ थाम कर वह चल खड़ी हुई। आसमान बादल आकर छा गये थे। चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा। कहीं कुछ दीख नहीं पड़ता था। फिर भी लड़के का हाथ थाम कर ... आगे बढ़ी जा रही थी। कुछ अकेले आज ही नहीं जा रही थी वह चिरन्तन नारी युग युग के अन्धकार में, उसे तुच्छ करके चिरकाल से इसी तरह आगे बढ़ी जा रही है;—दुःख और विपत्ति के इस अँधियारे पथ को इसी तरह पद-दलित करके ! उसे कोई भय नहीं है, कोई चिन्ता नहीं है।